ग्रामीण विकास
को समर्पित

कुरुक्षेत्र

वार्षिक मूल्य : 100 रुपये

वर्ष 54 अंक : 11 | सितम्बर 2008 | मूल्य : 10 रुपये

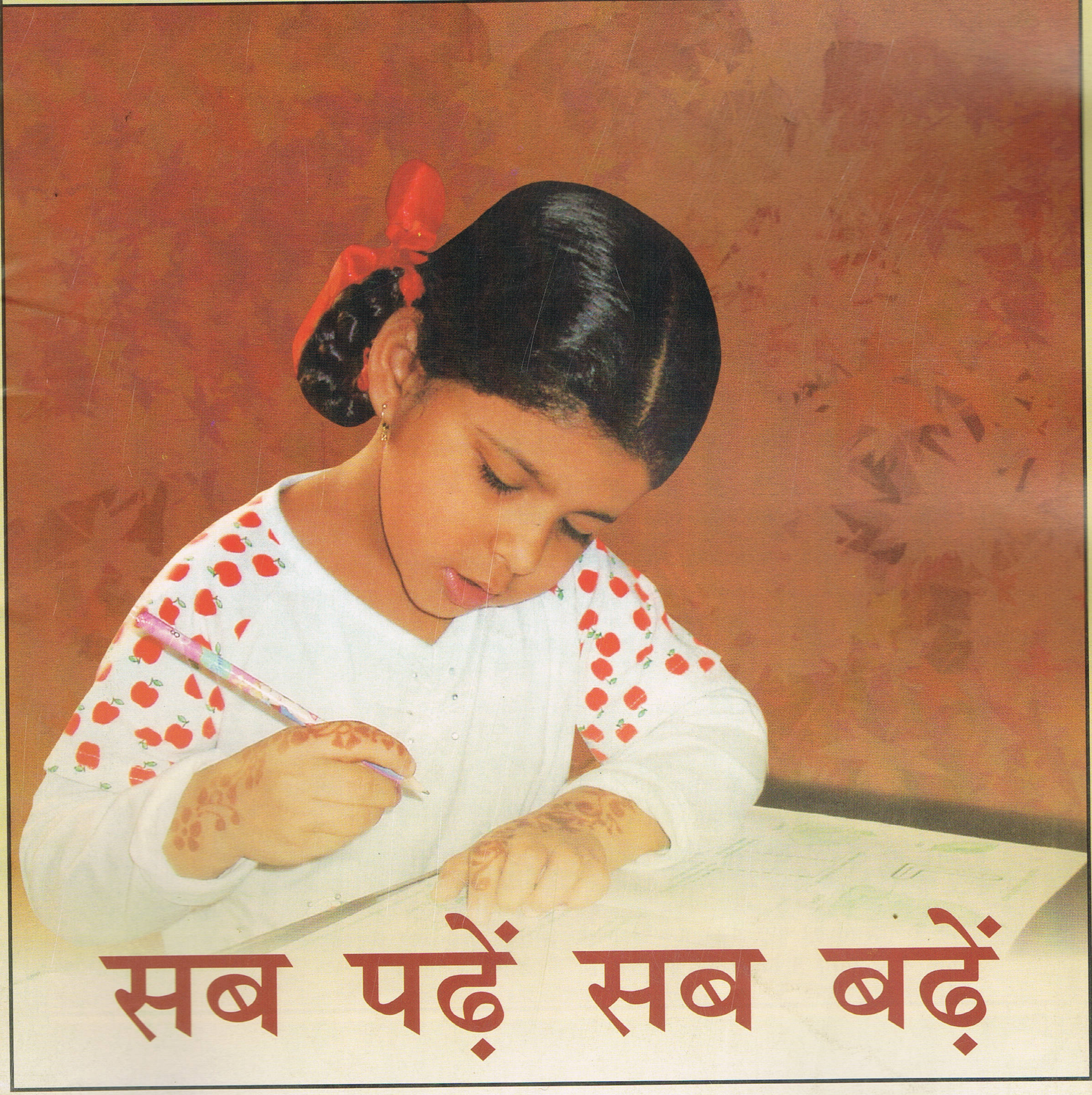

सब पढ़ें सब बढ़ें

प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह ने 15 अगस्त, 2008 को स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर लालकिले की प्राचीर से राष्ट्र को संबोधित किया । उनके भाषण के मुख्य अंश इस प्रकार हैं –

- ग्रामीण भारत में एक नई उम्मीद जगी है। ग्रामीण इलाकों में सेहत, शिक्षा, बिजली, सड़क, आवास और सिंचाई के लिए निवेश बहुत बढ़ा दिया है।
- उन्होंने सात सूत्रों की चर्चा की, जिन्हें लागू करने के लिए कदम उठाए गए । ये सात प्राथमिकताएं हैं – खेती, पानी, शिक्षा, सेहत, रोजगार, शहरी नवीकरण और बुनियादी ढांचे की मजबूती।
- कर्ज के बोझ से दबे किसानों को राहत देने के लिए लगभग 71,000 करोड़ रुपये का बैंकों से लिया गया कर्ज माफ किया गया।
- पिछले चार सालों में खेती के लिए बैंकों द्वारा दिए गए कर्ज की रकम 81,000 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 2,25,000 करोड़ रुपये कर दी गई है और ऐसे कर्ज पर ब्याज दर भी घटाई है।
- किसानों की आर्थिक हालत सुधारने के लिए अनाजों की खरीद कीमतों में काफी बढ़ोतरी की गई।
- चावल, गेहूं और दालों की पैदावार बढ़ाने के लिए राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन बनाया गया है।
- सिंचाई, जलाशयों, बारिश से सिंचाई वाले इलाकों और बाढ़ रोकने पर खास तवज्जो दी गई।
- राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के तहत गांवों में सेहत से संबंधित सरकारी सेवाओं को बढ़ाया जा रहा है।
- राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना पूरे देश में लागू। इसके जरिए गांव में रहने वाले सबसे ज्यादा जरूरतमंद करोड़ों लोगों को रोजी–रोटी की मदद दी जा रही है।
- उन्होंने कहा कि हम 6000 नए और अच्छे मॉडल स्कूल स्थापित कर रहे हैं जो सबकी पहुंच में होंगे।
- अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़े वर्ग और अल्पसंख्यक परिवारों के बच्चों के लिए प्रि–मैट्रिक और पोस्ट मैट्रिक वजीफों की योजनाएं चलाई जा रही हैं।
- पिछड़े जिलों में 373 नये कालेज, 30 नई यूनिवर्सिटियां, 8 नए आईआईटी, 7 नये आईआईएम, 20 नए आईआईआईटी, 5 नए भारतीय विज्ञान संस्थान, प्लानिंग और आर्कीटेक्चर के दो स्कूल तथा 10 एनआईटी और 1000 नए पालिटैक्नीक खोले जाने की घोषणा।
- कीमतों को काबू में रखने के लिए ठोस कदम उठाने पर जोर दिया।
- इंदिरा गांधी जी ने कहा था – 'गरीबी हटाओ'। हमारी नेता श्रीमती सोनिया गांधी ने हमें नारा दिया है – 'रोजगार बढ़ाओ'।
- इंदिरा गांधी पेंशन योजना के तहत अब गरीबी रेखा से नीचे की जिंदगी गुजारने वाले 65 वर्ष से ज्यादा उम्र के नागरिकों को पेंशन का लाभ दिया जा रहा है।
- सरकार को कुशल, पारदर्शी और जवाबदेह बनाने के लिए सूचना का अधिकार कानून एक बड़ा कदम है।
- मौसम में बदलाव का बुरा असर हमारी अर्थव्यवस्था पर कई तरह से पड़ सकता है। इसी के मद्देनजर सरकार ने जलवायु परिवर्तन पर एक राष्ट्रीय कार्यनीति बनाई है।

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 54 ★ मासिक अंक ★ पृष्ठ : 48

भाद्रपद–आश्विन 1930, सितम्बर 2008

वरिष्ठ सम्पादक
कैलाश चन्द मीना

सम्पादक
ललिता खुराना

संपादकीय पत्र–व्यवहार
वरिष्ठ संपादक, कुरुक्षेत्र
कमरा नं. 655, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 23061014, 23061952
फैक्स : 011–23061014, तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
एन.सी. मजुमदार

व्यापार प्रबंधक
जगदीश प्रसाद
दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516
ई–मेल : pdjucir_jcm@yahoo.co.in

आवरण एवं सज्जा
संजीव सिंह और रजनी दवे

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

कुरुक्षेत्र

इस अंक में

लेख	लेखक	पृष्ठ
आओ जगाएं गांवों में शिक्षा का अलख	भगवती पांडे	4
प्रौढ़ शिक्षा के जरिए ग्रामीण महिलाओं का विकास	श्रीनित्या मालवीया	8
अनुसूचित जाति एवं जनजाति की शिक्षा का प्रयास व परिणाम	बैजनाथ पाण्डेय	12
आदिवासी समाजः शिक्षा से वंचित हैं जो	कन्हैया त्रिपाठी	15
प्राथमिक शिक्षा में मिड-डे मील कार्यक्रम की प्रासंगिकता	डॉ. घनश्याम द्विवेदी	17
सर्वशिक्षा अभियान : योगदान और अपेक्षाएं	डॉ. उमेश चन्द्र अग्रवाल	20
ग्रामोत्थान के लिए प्राथमिक शिक्षा का महत्व	प्रो. विमला उपाध्याय	25
बुनियादी शिक्षा की चुनौतियां व समाधान	डॉ. इन्दु पाठक	28
गांवों में साक्षरता कार्यक्रम की पहल	के. जी. श्रीवास्तव	32
झारखंड : पेट छुड़ाए स्लेट	संदीप कुमार	35
गाजर घास का बढ़ता प्रकोप	डॉ. सुनील कुमार खण्डेलवाल	38
फूलों के बीजों की लाभदायक खेती	शमशेर अहमद खान	43
सीताफल एक उपयोगी शाकीय फल	मधु ज्योत्सना	45
सफलता की कहानी	रामचरण धाकड़	47

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

संपादकीय

'भारत तभी बदल सकता है जब हरेक भारतीय पढ़ा लिखा हो, सबको भरपेट खाना मिले, हरेक सेहतमंद हो और सभी को अच्छा रोजगार मिल पाए।' 15 अगस्त, 2008 को लालकिले की प्राचीर से राष्ट्र के नाम अपने संबोधन में प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह द्वारा व्यक्त किए गए ये उद्गार सरकार की इस चिंता और इच्छा को व्यक्त करने में सक्षम हैं कि वह हर नागरिक की रोजी–रोटी, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी बुनियादी जरूरतें पूरी करने को आमदा है। और क्यों न हो! जिस देश की आधी से अधिक आबादी गांवों में बसती हो उस देश में हर गांव में हर बच्चे तक शिक्षा की पहुंच सुनिश्चित करना किसी भी सरकार का परम कर्तव्य है। वर्तमान सरकार को भी अपने इस कर्तव्य का अहसास है। सरकार पूर्ण साक्षरता हेतु कई कार्यक्रम चला रही है इसके बावजूद अभी तक हम संपूर्ण भारत के साक्षर होने के लक्ष्य से कोसों दूर हैं। आज भी देश में 35 करोड़ से अधिक निरक्षर हैं। जाहिर तौर पर इन योजनाओं के क्रियान्वयन में कई बुनियादी कमियां हैं जिनकी तरफ ध्यान देना बेहद जरूरी है ताकि हम जल्दी से जल्दी पूर्ण साक्षरता के अपने लक्ष्य की ओर बढ़ सकें।

आज जब हम संपूर्ण भारत में हर नागरिक तक शिक्षा पहुंचाने का स्वप्न देख रहे हैं तो हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि शिक्षा केवल 'कागजी' न होकर मूल्यपरक भी हो। शिक्षा का अर्थ केवल रोजगार पाना ही न हो बल्कि मनुष्य का सर्वांगीण विकास हो ताकि हर नागरिक में सही और गलत के मध्य फैसला करने की समझ विकसित हो।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था–'शिक्षा से मेरा अभिप्राय मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा के गुणों का सर्वांगीण विकास करना है।' गांधीजी की 'नई तालीम' नामक शिक्षा प्रणाली गांव के परिवेश और उसकी जरूरत के अनुरूप थी जिसमें शरीर, आत्मा और मस्तिष्क तीनों का विकास संभव था । जबकि आम शिक्षा में सिर्फ मस्तिष्क के विकास को ही प्राथमिकता दी जाती है ।

तात्पर्य यह है कि शिक्षा और मूल्य के बीच गहरा संबंध है। मूल्यहीन शिक्षा वास्तव में शिक्षा न होकर केवल तोतारटंत है। इसीलिए यह जरूरी है कि प्राथमिक शिक्षा सबको उपलब्ध हो पर उसके पाठ्यक्रम में मूल्यबोध का भी दर्शन हो ताकि बच्चों में ऊंचे संस्कार विकसित हों और उनकी सुप्त चेतना जागे। वे अपने साथ–साथ अपने पड़ोसी, समाज और देश के विकास के बारे में भी सोचें।

हमारे देश के सैकड़ों गांवों में आज भी गरीबी है, अज्ञानता है और पिछड़ापन है। ऐसे में गांवों में ज्ञान का दीपक जलाने के हमारे प्रयास तभी सही मायने में सार्थक हो सकते हैं जब हमारी शिक्षा बच्चों को रोजगार देने के साथ–साथ सच्चा नागरिक बनने में भी मददगार साबित हो। मूल्यपरक शिक्षा से ही ऐसा संभव है ।

मत-सम्मत

ग्रामीण विकास को समर्पित मासिक पत्रिका कुरुक्षेत्र का मई 2008 का अंक ग्रामीण पर्यटन विशेषांक पढ़ा। पढ़ने के बाद मुझे लगा कि वास्तव में यदि ग्रामीण क्षेत्रों की ऐतिहासिक वस्तुओं को संरक्षित किया जाए तो ग्रामीणों की हालत ठीक हो सकती है। ग्रामीणों को यदि इस दिशा में सोचने का मौका मिले तो निश्चित ही विकास होगा। सरकार को चाहिए कि वे ग्रामीण पर्यटन को बढ़ावा दें। इससे गांव की आर्थिक हालत में सुधार होगा।

प्रवीण कुमार पाठक – सामुदायिक समन्वय (जीविका), बिहार

कुरुक्षेत्र मई, 2008 'ग्रामीण पर्यटन से टिकाऊ विकास' सच्चाई के करीब लगा। पर्यटन उद्योग का बदलता चेहरा, ग्रामीण पर्यटन में पंचायत की भूमिका, राजस्थान का पर्यटन परिदृश्य, तथ्य और चुनौतियां में पर्यटकों को लुभाता राजस्थानी लोकनृत्य देख राजस्थान जाने को दिल मचलने लगा एवं 'आकर्षण का केंद्र ऊंट उत्सव' व 'बांस ने बनाया सुबेलाल को लखपति' एवं 'रोग निवारक घृतकुमारी' लेख पसंद आये।

आबिद मजीद इराकी – इण्डिया श्रृंगार स्टोर, जहानाबाद (बिहार)

संपादकीय में कही हुई बातें दिल में उतर गयी। डॉ. राजेश व्यास जी का लेख–ग्रामीण पर्यटन से टिकाऊ विकास, एवं डॉ. सुधीश कुमार जी का लेख 'पर्यटन उद्योग का बदलता चेहरा' हमारी आंखों के सामने से पर्दा हटाने के लिए काफी है। गिरीश चंद्र पाण्डे, मनीष कुमार सिन्हा, अनिल कुमार पटले, मधु ज्योत्सना आदि लेखकों के लेख लाजवाब थे। कुरुक्षेत्र को दिन–प्रतिदिन निखारने हेतु संपादकमंडल एवं तमाम लेखकों को दिल की गहराई से क्रांतिकारी अभिनंदन।

जयकरण कुमार 'सत्यार्थी' – एस.एस.वी. कॉलेज, कहलगांव, भागलपुर, (बिहार)

मई, 2008 का कुरुक्षेत्र 'ग्रामीण पर्यटन' शीर्षक के साथ पर्यटन की छटा बिखेरता प्राप्त हुआ। ग्रामीण पर्यटन पर आधारित यह अंक अपने–आप में अद्भुत है जिसमें विभिन्न राज्यों के पर्यटन स्थलों का परिचय भी प्राप्त हुआ वहीं ग्रामीण पर्यटन की संभावनाएं व चुनौतियां भी जानने को मिली। मनीष कुमार सिन्हा द्वारा लिखित लेख 'हाशिए पर जीते असंगठित कामगार' ने मई अंक को सार्थक कर दिया क्योंकि मई माह की शुरुआत मजदूर दिवस से होती है।

**प्रो. सहदेव पारीक–मु.पो. मन्नीवाली, तः सादुलशहर,
जिला–श्री गंगानगर (राज)**

कुरुक्षेत्र का जून अंक पढ़ा। जल जीवन के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है, लेकिन आज के युग में भी जनहित में शुद्ध जल आपूर्ति तथा जल–प्रदूषण एक बहुत ही गंभीर समस्या है। जिस तेजी से जंगल को काटा जा रहा है उसी तेजी से जलस्तर निरंतर गिरता जा रहा है। इस अंक में डॉ. राकेश कुमार प्रजापति द्वारा लिखित 'अफीम की खेती और संरक्षण' लेख बहुत ही ज्ञानवर्द्धक और जानकारी भरा है।

अजय कुमार शर्मा – गिरिडीह, झारखण्ड

मैं कुरुक्षेत्र मासिक पत्रिका का नियमित पाठक हूं, पत्रिका काफी ज्ञानवर्धक तथा ग्रामीण विकास को समर्पित है। इस पत्रिका के संबंध में मेरा सुझाव है कि इसमें कृषि एवं पशुपालन संबंधी लेख अधिक मात्रा में प्रकाशित किए जाने चाहिए जिससे ग्रामीण भारत को अपनी खेतीबाड़ी के साथ ही पशुपालन की बड़े स्तर पर जानकारी उपलब्ध हो सके।

शिमुपाल सिंह नेगी – अकाल सदन, नपगांव कोटद्वार, उत्तराखण्ड

कुरुक्षेत्र का जुलाई, 2008 का अंक पढ़ा। यह अंक 'हरित–क्रांति' पर केंद्रित था। विभिन्न लेखों के माध्यम से जिस प्रकार हरित–क्रांति के सभी पहलुओं को उजागर करने की कोशिश की गई है, वह अद्भुत है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में कृषि क्षेत्र एवं किसानों की वास्तविक समस्याओं के निदान हेतु इस प्रकार की पहल अति आवश्यक है, ताकि उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ सामाजिक एवं पर्यावरण के क्षेत्र में भी संतुलन बना रहे। डॉ. सुधीश कुमार पटेल के लेख ने विशेष प्रभावित किया। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है, आगामी अंक भी इसी प्रकार प्रेरणास्रोत साबित होंगे।

श्याम मूर्ति भारती – शोधार्थी, इतिहास विभाग, दरभंगा (बिहार)

जुलाई, 2008 अंक जो 'हरित--क्रांति' पर आधारित है, मैं इसका गहन अध्ययन करने के बाद आपको पत्र लिख रहा हूं। इस पत्रिका में संपादकीय पृष्ठ वास्तव में ज्ञान का भण्डार था। लेखक डॉ. अरविंद सिंह द्वारा लिखित आलेख "दुष्प्रभावों के कारण वरदान से अभिशाप बनी हरित क्रांति" वास्तव में ज्ञानवर्धक है। इसी के साथ विश्व जनसंख्या दिवस के अवसर पर "बढ़ती जनसंख्या–एक समस्या", के लिए इसकी लेखिका डॉ. अंजली जायसवाल का प्रयास काबिलेतारीफ है। डॉ. जसवीर सिंह एवं डॉ. तेजपाल द्वारा लिखा लेख 'कुपोषण : कारण और बचाव' तथा सफलता की कहानी में लेखक वीरेंद्र परिहार द्वारा लिखे लेख 'रेगिस्तान को नखलिस्तान बना रहे हैं जयसिंह भाटी' ये भी ज्ञानवर्धक लेख हैं। इन सभी रचनाओं के लिए कुरुक्षेत्र पत्रिका के संपादक मंडल को मेरी तरफ से धन्यवाद।

सुजीत कुमार – आर.एम.एस. कॉलोनी, उर्दू बाजार, भागलपुर, (बिहार)

आओ जगाएं गांवों में शिक्षा का अलख

भगवती पांडे

यों तो शिक्षा का महत्व ग्रामीण तथा शहरी इलाकों में समान रूप से है क्योंकि शिक्षा मानव गरिमा के साथ–साथ मानवाधिकार, स्वतंत्रता तथा सामाजिक मूल्यों की रक्षा में सहायक है। परंतु ग्रामीण संदर्भ में शिक्षा की उपादेयता इस दृष्टि से अधिक है कि आज भी भारत की लगभग दो तिहाई आबादी गांवों में रहती है और गांवों की खुशहाली में ही भारत की खुशहाली निहित है जिसमें शिक्षा एक महत्वपूर्ण औजार है। शहरों और गांवों के बीच शैक्षणिक स्थिति में काफी असमानता है। शहरी आबादी में शिक्षा की स्थिति काफी अच्छी है। हालांकि गांवों से शहरों की ओर मजदूरी के लिए कूच कर गए लोगों के परिवारों में अशिक्षा आज भी एक मुख्य समस्या है और उसका मूल कारण गरीबी है। ऐसे परिवार बच्चे को स्कूल भेजने के बजाय उनसे मजदूरी कराना श्रेयस्कर समझते हैं यानी 'जितने हाथ उतनी अधिक आय' की आशा में बच्चों का जीवन बर्बाद करने में भी वे नहीं हिचकते। इसकी वजह इन परिवारों का स्वयं अशिक्षित होना है।

शिक्षा में सुधार हेतु केंद्र तथा राज्य स्तर पर समितियों तथा आयोगों का गठन हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के तुरंत बाद संविधान की धारा 39 तथा 45 में बच्चों के सुकुमार जीवन तथा उसकी शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया। वर्ष 1968 में पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति को वर्ष 1991 में संशोधित कर शिक्षा के प्रचार–प्रसार में तेजी लाने के प्रयास किए गए। पुनः वर्ष 1986 में घोषित राष्ट्रीय शिक्षा नीति की 1992 में समीक्षा की गयी और 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों के लिए शिक्षा पर विशेष ध्यान केंद्रित किया गया। वर्ष 1988 में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन की स्थापना के साथ 8 सितंबर को अंतर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस के रूप में मनाने का निर्णय लिया गया। साक्षरता में और तेजी लाने के लिए 2001 में प्रारंभ 'सर्वशिक्षा अभियान' के तहत वर्ष 2010 तक 6–14 आयु वर्ग के सभी बच्चों को शिक्षा प्रदान करने की योजना को कार्यरूप देने हेतु संविधान में 86वां संशोधन किया गया। उल्लेखनीय है कि वर्ष 2000 में चालू 16,000 करोड़ रुपए का यह अभियान भारत में आजादी के बाद का सबसे बड़ा तथा सर्वाधिक महत्वाकांक्षी शैक्षिक कार्यक्रम है और जिसमें बालिका शिक्षा पर विशेष जोर दिया गया है। इसका उद्देश्य न केवल 11 लाख बस्तियों के एक करोड़ 92 लाख बच्चों को स्कूल में प्रवेश देना है बल्कि प्रवेश के बाद उन बच्चों को वहां आठ वर्षों तक अनिवार्य रूप से बनाए रखना भी है। इस हेतु 1997–98 से केंद्र सरकार द्वारा पूरे देश में अरबों रुपए की मध्याह्न भोजन योजना भी प्रारंभ की गयी।

यह विश्व में सबसे बड़ा स्कूली पौषणिक कार्यक्रम है जिसमें अभी तक लगभग 11.4 करोड़ बच्चों को शामिल किया गया है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य छात्रों को पौष्टिक भोजन उपलब्ध कराने के साथ–साथ स्कूलों में दाखिला बढ़ने और ड्रॉपआउट की समस्या से निजात पाना भी था। परंतु यह योजना भी अपने उद्देश्य से भटक गयी और इसके कार्यान्वयन के दौरान छुआछूत तथा भेदभाव की घटनाओं के साथ ही भ्रष्टाचार की शिकायतें भी सामने आयीं। बच्चों को परोसे जाने वाले भोजन की पौष्टिकता पर भी संदेह व्यक्त किया गया। जुलाई 2004 में कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों की स्थापना अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़े वर्ग और अल्पसंख्यक समुदायों की बालिकाओं की शिक्षा में समानता लाने के उद्देश्य से की गयी है। स्मरण रहे कि ये आवासीय विद्यालय हैं। इन विद्यालयों ने लिंग असमानता को समाप्त करने में काफी योगदान दिया है। इसके अतिरिक्त, जवाहर नवोदय विद्यालयों की अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों तक पहुंच को सुनिश्चित करने की व्यवस्था की गयी है और मौजूदा वित्त वर्ष में 20 ऐसे जिलों में विद्यालय खोलने का प्रस्ताव है जहां इन जातियों की बहुतायत है। चरवाहा विद्यालय, समाख्या और सहेली जैसे कार्यक्रमों ने भी गांवों में शिक्षा के प्रसार को बढ़ावा दिया है।

> जब भारत आजाद हुआ तो बहुसंख्यक जनता अनपढ़ थी। इसके लिए तत्कालीन उपनिवेशवादी शासन नीतियां जिम्मेदार थी। आजादी के बाद भारत ने शिक्षा के प्रचार–प्रसार में लंबे डग भरे। परिणामस्वरूप, जहां 1961 में केवल 28 प्रतिशत भारतीय शिक्षित थे, वहीं 2006 में यह बढ़कर 66 प्रतिशत हो गया। इस प्रकार लगभग 40 प्रतिशत की शानदार बढ़ोतरी दर्ज की गयी। प्राथमिक शिक्षा (कक्षा 1–8) में नामांकित बच्चों की संख्या 1951 में लगभग 1.9 करोड़ थी जो अब 13 करोड़ यानी सात गुना अधिक है। इसी प्रकार उक्त वर्षों में कक्षा 9–12 में नामांकन 15 लाख से बढ़कर 3.7 करोड़ हो गया जो 25 गुना बढ़ोतरी प्रदर्शित करता है। उच्च शिक्षा में भी नामांकन में 1.7 लाख से बढ़ोतरी होकर यह 1.2 करोड़ हो गया। इसमें 70 गुना बढ़ोतरी देखी गयी।

हाल में केंद्र सरकार द्वारा सर्वशिक्षा अभियान की अगली कड़ी के रूप में राष्ट्रीय छात्रवृत्ति योजना की घोषणा एक स्वागत योग्य कदम है।

सरकार द्वारा यह कदम माध्यमिक स्तर पर पढ़ाई बीच में छोड़ने वाले विद्यार्थियों की मजबूरी को समाप्त करने हेतु उठाया गया है। 11वीं पंचवर्षीय योजना (2007–12) के दौरान हर वर्ष ऐसे एक लाख विद्यार्थियों को उनकी आर्थिक स्थिति और योग्यता के आधार पर (यानी जिनके मां–बाप की वार्षिक आय डेढ़ लाख रुपए से ज्यादा न हो) राज्य स्तर पर आयोजित परीक्षा उत्तीर्ण करने पर 6 हजार रुपए की वार्षिक छात्रवृत्ति दी जाएगी। चूंकि यह योजना पूर्णतः केंद्र सरकार द्वारा संचालित है, इसलिए सर्वशिक्षा अभियान की भांति इसमें निधि पोषण की समस्या आड़े नहीं आएगी क्योंकि सर्वशिक्षा अभियान में केंद्र तथा राज्य सरकारों के बीच निधिपोषण की व्यवस्था है और जिसमें केंद्र तथा राज्यों के बीच अक्सर विवाद पैदा होने से इस कार्यक्रम से अभी तक आशानुरूप परिणाम नहीं मिले।

पहले विद्यादान फिर कन्यादान

यहां यह भी उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि निरक्षरता की समस्या विश्वव्यापी है। इसीलिए शिक्षा के अधिकार को वर्ष 1948 के विश्व मानवाधिकार घोषणापत्र में स्पष्ट रूप से उल्लिखित किया गया है। संयुक्त राष्ट्र ने अपने सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्यों में शिक्षा को गरीबी से जोड़ते हुए 2015 तक विश्वव्यापी निर्धनता को आधा करने के लक्ष्य को स्वीकार किया है। यही नहीं, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जोम्तिएन (थाइलैंड) में आयोजित 1990 के सर्वशिक्षा से संबंधित विश्व सम्मेलन में भारत ने 155 देशों के साथ भाग लिया था और जिसमें वर्ष 2000 तक वयस्क निरक्षरता की दर में आधी कमी किए जाने का संकल्प व्यक्त किया गया था। इसी क्रम में अप्रैल, 2000 मे सेनेगल (डकार) में विश्व शैक्षिक मंच की बैठक आयोजित की गयी। 21वीं सदी के लिए शिक्षा पर जॉक डेलर्स आयोग ने शिक्षा के 4 स्तंभों अर्थात् 'कुछ बनना, कुछ जानना, कुछ करना तथा साथ रहकर सीखने' पर ध्यान केंद्रित किया। यह भी उल्लेखनीय है कि नब्बे के दशक से प्रारंभ उदारीकरण के दौर से संपूर्ण विश्व प्राथमिक शिक्षा की अनिवार्यता तथा उसके सार्वभौमिकरण पर ज्यादा चिंतित रहा है। जहां चीन, निकारागुआ तथा मिस्र ने शिक्षा को प्रमुख राष्ट्रीयता मानकर संपूर्ण शक्ति उसमें लगाई, वहीं यूनेस्को तथा यूनिसेफ जैसी अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने इसे मौलिक अधिकार में शामिल करने की वकालत की। नोबेल पुरस्कार विजेता डॉ. अमर्त्य सेन का कहना है कि अशिक्षा आतंकवाद से बड़ी समस्या है।

लेकिन भारत में पर्याप्त सांविधिक व्यवस्था और शिक्षा में सुधार से संबंधित केंद्र तथा राज्य सरकारों को पेश की गयी रिपोर्टों पर यथोचित कार्रवाई न होने और देश में व्याप्त भ्रष्टाचार और उचित मॉनीटरिंग के अभाव में शिक्षा में सुधार से संबद्ध कार्यक्रमों के इच्छित परिणाम नहीं मिले। यह बात ग्रामीण तथा शहरी दोनों क्षेत्रों पर लागू होती है। यह सचमुच इस देश की विडंबना है कि देश की अर्थव्यवस्था का मेरुदंड कही जाने वाली कृषि और ज्ञान की धरती के नाम से ख्यात भारत में कृषि तथा शिक्षा निरंतर पिछड़ती चली गयी। इससे अधिक देश का दुर्भाग्य क्या होगा कि देश का अन्नदाता किसान आत्महत्या करने को विवश है तो दूसरी ओर जिस नौनिहाल को देश का भविष्य कहा जाता है, वह बालश्रम करने को विवश है, कूड़ा बीनता है और जब इससे भी उसकी उदरपूर्ति नहीं होती तो वह धीरे–धीरे युवा होकर अपराध की दुनिया में कदम रखता है। आज समाज में अपराधों की जो बाढ़ आई है, उसके मूल में यह एक मुख्य कारण है। इसलिए वक्त का तकाजा है कि न केवल ग्रामीण क्षेत्रों में सबके लिए शिक्षा उपलब्ध कराई जाए बल्कि उसकी गुणवत्ता पर भी ध्यान केंद्रित किया जाए।

आज सरकार द्वारा शिक्षा पर शत–प्रतिशत विदेशी निवेश तथा सार्वजनिक–निजी भागीदारी की बात की जा रही है। परंतु गांवों में उसकी प्रासंगिकता कहां तक है, यह भी एक विचारणीय प्रश्न है क्योंकि गांवों में आज भी सरकारी स्कूलों (कुछ गिने–चुने पब्लिक स्कूलों) पर ही शिक्षा का दारोमदार है। गांवों में अधिकांश सरकारी स्कूलों की स्थिति दयनीय है। वहां न तो आपरेशन ब्लैकबोर्ड के अंतर्गत क्लासरूम, कुर्सी–डेस्क, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, ऑडीटोरियम, कम्प्यूटर टर्मिनल आदि की यथोचित सुविधाएं हैं

और न ही पानी, बिजली, शौचालय, सफाई की उचित व्यवस्था है। सुदूर गांवों में बिना छत तथा बिना शौचालय सुविधा के स्कूलों की आज भी मौजूदगी एक आम बात है।

गांवों में आज तेजी से स्कूल खुल रहे हैं परंतु उस अनुपात में शिक्षक नहीं होने से बच्चों की पढ़ाई पर प्रतिकूल असर पड़ रहा है। इसलिए गांवों में कोई विद्यालय खोलने से पहले हमें शिक्षकों की नियुक्ति, उनके प्रशिक्षण और कक्षा में उनकी उपस्थिति सुनिश्चित करनी होगी। साथ ही शिक्षकों की कार्यदशाओं, उनके रहने की व्यवस्था तथा आवास से उनके स्कूल की दूरी आदि पर भी विशेष ध्यान देना होगा। यहां विशेष रूप से उल्लेख करना समीचीन होगा कि सरकार को शिक्षकों को शिक्षण के अलावा किसी अन्य कार्य जैसे जनगणना, चुनाव डयूटी या अन्य गांवों में लगाने से पूरी तरह बचना होगा क्योंकि इसका सीधा असर बच्चों की शिक्षा पर पड़ता है। हमें गांवों में शिक्षा के गिरते स्तर के लिए सारा दोष शिक्षकों पर मढ़ने की प्रवृत्ति से बचते हुए बच्चों के मां–बाप तथा अभिभावकों पर भी यह दायित्व डालना होगा कि वे शिक्षकों को पूर्ण सहयोग दें और बच्चे की समय–समय पर प्रगति लेते हुए कहीं अगर उसे किसी विषय में दिक्कत महसूस हो तो उसके निराकरण में प्रभावी कदम उठाएं। साथ ही आज के सूचना प्रौद्योगिकी के दौर में गांवों की शिक्षा में कम्प्यूटर तथा अंग्रेजी शिक्षा पर विशेष ध्यान देना होगा और समय–समय पर शिक्षकों को सूचना क्रांति के इस युग में अपटूडेट रखते हुए उनके लिए प्रशिक्षण, सेमिनार तथा कार्यशालाओं का आयोजन करना होगा। सरकार को अपना ध्यान विशेष रूप से बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान और उड़ीसा जैसे बीमारू राज्यों के अलावा जहां आबादी का एक बड़ा भाग रहता है, सुदूर ग्रामीण अंचलों पर भी केंद्रित करना होगा।

शिक्षा चूंकि समवर्ती सूची का विषय है, इसलिए इसका दायित्व केंद्र सरकार तथा राज्य सरकारों द्वारा वहन किया जाता है। स्कूली शिक्षा की व्यवस्था जहां राज्य सरकारों के अधीन है वहीं उच्च शिक्षा के लिए केंद्र सरकार जिम्मेदार है। यह भी वास्तविकता है कि प्रत्येक राज्य की अपनी–अपनी समस्याएं तथा भौगोलिक परिस्थितियां हैं, इसलिए शिक्षा के संदर्भ में राज्य स्तर पर अधिक विकेंद्रित तथा स्थान विशिष्ट पहलकदमियों की आवश्यकता है। प्राथमिक शिक्षा को पूर्णतः ग्राम पंचायतों को सौंपने से भी इस दिशा में काफी हद तक सुधार की गुंजाइश है। परंतु इससे पहले वित्तीय तथा प्रशासनिक दृष्टि से उन्हें सशक्त बनाना जरूरी है।

यह भी उल्लेखनीय है कि अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के लिए हम आरक्षण की बातें भले ही जितनी कर लें परंतु वास्तविकता यह है कि शहरी इलाकों के बिल्कुल उलट ग्रामीण इलाकों में आज भी इन वर्गों के अधिकांश बच्चे शिक्षा से वंचित हैं। इसका श्रेय कुछ हद तक गांवों में व्याप्त छुआछूत की समस्या के साथ मुख्यतः गरीबी को जाता है। इन परिवारों में परिवार नियोजन कार्यक्रम पर भी ध्यान देना होगा क्योंकि परिवार के बड़े आकार की वजह से इन्हें समाज कल्याण की किसी भी योजना से, जिसमें यथोचित शिक्षा की व्यवस्था भी शामिल है, वांछित परिणाम प्राप्त नहीं होते। इसका सीधा असर बच्चों पर पड़ता है। गरीबी की वजह से प्रारंभ में वे कुपोषण के शिकार हो जाते हैं और शिक्षा के बजाय उन्हें भूखे पेट की चिंता ज्यादा सताती है। इसीलिए जिस उम्र में उन्हें विद्यालय में होना चाहिए, वे जोखिम भरे कार्यों में संलग्न रहते हैं या असंगठित क्षेत्र, खेत–खलिहानों, मिलों–कारखानों, छोटे होटल, ढाबों में कार्य करने को विवश हैं। बालिकाओं की स्थिति ज्यादा चिंताजनक है। यौन शोषण के अलावा उनकी तस्करी तथा वेश्यावृत्ति की समस्या विकट है। इससे यह भी निष्कर्ष निकालने में देर नहीं लगती कि भले ही हम इन वर्गों हेतु मुफ्त शिक्षा, कापी–किताब और स्कूली ड्रेस तथा छात्रवृत्ति की व्यवस्था करते रहें परंतु जब तक उसकी मॉनीटरिंग पर ध्यान नहीं देते और समय–समय पर ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले इन वर्गों के परिवारों की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति की समीक्षा नहीं करते तब तक इन परिवारों के बच्चों की शिक्षा तक पहुंच संभव नहीं है। यहां एक सुझाव यह भी दिया जा सकता है

> जब हम गांवों में शिक्षा की बात करते हैं तो साथ में हमें इस बात को भी ध्यान में रखना होगा कि शैक्षणिक क्षेत्र में शहरी तथा ग्रामीण असंतुलन का भेद मिटे क्योंकि गांवों तथा शहरों में शिक्षा के स्तर में काफी फर्क है। शहरों में अंग्रेजी माध्यम से ही संपूर्ण शिक्षा दी जा रही है, और पब्लिक स्कूलों की भरमार है वहीं गांवों में हिंदी माध्यम से पढ़ाई हो रही है। स्वभावतः गांव में शिक्षित नौजवान नौकरी की खोज में शहर आने पर अपने को ठगा–सा महसूस करता है। हम इस वास्तविकता को भी नहीं नकार सकते कि उदारीकरण के मौजूदा दौर में जबकि सेवा क्षेत्र तेजी से फलफूल रहा है और संपूर्ण विश्व की अर्थव्यवस्थाएं एक–दूसरे के संपर्क में आ रही हैं, वहीं हमारे समक्ष देश के मानव संसाधन के बतौर इन युवाओं को अधिकाधिक दक्ष बनाना आज की सबसे बड़ी चुनौती है। हमें इस बात पर भी गंभीरता से विचार करना होगा कि आखिर कब तक हमारे युवा मजबूरन पेट की आग को शांत करने के लिए अपराध की दुनिया में कदम रखने या विदेशों में प्रवासी बनकर मजदूरी करने को विवश होते रहेंगे।

कि कस्तूरबा गांधी विद्यालय की भांति इन कमजोर वर्गों के बच्चों के लिए भी अलग से आवासीय विद्यालय खोले जाएं। जहां तक समाज का इन वर्गों के प्रति भेदभाव बरतने का संबंध है, उसमें बदलाव तभी संभव है जबकि समाज के बुद्धिजीवी और समाजसेवी आगे आएं और इस दिशा में पहल करें क्योंकि यह समस्या कानूनी डंडे से हल नहीं की जा सकती।

गांवों में स्कूली शिक्षा के संबंध में हमें इस तथ्य को भी ध्यान में रखना होगा कि अधिकांश विद्यार्थी स्कूली शिक्षा केवल आर्थिक स्थिति के कमजोर होने की वजह से नहीं छोड़ते बल्कि उन्हें स्कूली शिक्षा बोझ लगने लगती है। इसके लिए भारी–भरकम बस्ते का बोझ भी काफी हद तक जिम्मेदार है। इसलिए हमें ऐसी व्यवस्था सुनिश्चित करनी होगी कि शिक्षा व्यवस्था केवल परीक्षा देने तक सीमित न रहे बल्कि शिक्षा के तीन महत्वपूर्ण घटकों यथा–प्रशिक्षण, शिक्षण तथा परीक्षा के बीच हमें तालमेल रखना होगा ताकि बच्चा स्कूल के प्रति बोरियत और असहजता महसूस न करे। एक सुझाव यह भी दिया जा सकता है कि शिक्षा के प्रति अरुचि दर्शाने वाले इन्हीं विद्यार्थियों को यदि माध्यमिक शिक्षा के बाद व्यावसायिक शिक्षा की तरफ मोड़ा जाए तो इससे दो उद्देश्य पूर्ण होंगे। पहला, ग्रामीण इलाके के ये गरीब छात्र शिक्षा की मुख्यधारा से जुड़े रहेंगे। दूसरा, उनके लिए रोजगार की माकूल व्यवस्था सुनिश्चित होगी। इस संबंध में औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं (आईटीआई) की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है इसलिए गांवों में ऐसे संस्थान खोले जाएं। केंद्र सरकार इस दिशा में प्रयत्नशील है। उसने विश्व बैंक समर्थित 238 आईटीआई पर कार्य आरंभ किया। सार्वजनिक–निजी भागीदारी योजना के तहत 29 राज्यों में 309 आईटीआई की पहचान करके उन्हें इंडस्ट्री के साथ संबद्ध कर दिया है ताकि आईटीआई से प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद इन प्रशिक्षार्थियों को संबंधित इंडस्ट्री में रोजगार मिल जाए। इसके अलावा, वर्ष 2008–09 के बजट में 750 करोड़ रुपए का प्रावधान करते हुए उसके द्वारा 300 और आईटीआई को अपग्रेड करना प्रस्तावित है।

निःसंदेह शिक्षित होना हर व्यक्ति का जन्मसिद्ध अधिकार है लेकिन यह तभी संभव है जबकि इसकी पहुंच समाज के सबसे निचले तबके तक सुनिश्चित हो। हर्ष का विषय है कि 11वीं पंचवर्षीय योजना में शिक्षा की मद में सकल बजट के 19 प्रतिशत तक खर्च करने की व्यवस्था है जबकि 10वीं योजना में यह धनराशि आवंटित बजट का 7.68 प्रतिशत थी। अभी शिक्षा में जीडीपी का लगभग 4 प्रतिशत खर्च किया जा रहा है जिसे बढ़ाने की आवश्यकता है। 1968 में गठित एक समान स्कूली शिक्षा की सिफारिश करने वाले कोठारी आयोग ने इसे 6 प्रतिशत करने की सिफारिश की थी। हमें यह नहीं भूलना है कि शिक्षा पर किया गया व्यय अनुत्पादक नहीं बल्कि एक ऐसा दीर्घकालिक निवेश है जिसके बल पर राष्ट्र की प्रगति संभव है।

यह भी सत्य है कि शिक्षा की उपयोगिता सामाजिक तथा आर्थिक भेदभाव के दुष्चक्र को तोड़कर अंततः समाज से अपने को आत्मसात करने में निहित है। शिक्षा न केवल आम लोगों के लिए होनी चाहिए बल्कि इसकी अनुभूति प्रत्येक नागरिक को उसी भावना के अनुरूप हो। इसलिए शिक्षा को एक समग्र जीवन दृष्टि के रूप में देखने पर ही परिवार तथा समाज का कल्याण सुनिश्चित है। इसके लिए दृढ़ सामाजिक तथा राजनीतिक प्रतिबद्धता के साथ ही कल्पनाशील विचारों की जरूरत है और यह तभी संभव है जबकि किसी भी शैक्षणिक सुधार कार्यक्रम में सरकार के साथ ही बुद्धिजीवियों, समाजशास्त्रियों तथा शिक्षाविदों के अनुभवों का लाभ उठाया जाए। यहां यह कहने में संकोच नहीं होना चाहिए कि हमारे देश के नीति निर्माता आज भी अपने को लार्ड मैकाले की भारतीयों को क्लर्क बनाने की सोच से अलग नहीं कर पाए और जिसका परिणाम हम बेरोजगारी की भयावह समस्या के रूप में देख रहे हैं। इसलिए आज शिक्षा के विविधीकरण पर जोर देने की भी जरूरत है। हमें विद्यार्थियों को ऐसी शिक्षा देने पर जोर देना होगा जो नैतिक तथा मानवीय मूल्यों के साथ उद्यमशीलता की भी पोषक हो। यह तभी संभव है जबकि उदारीकरण के मौजूदा दौर में सेवा क्षेत्र की चमक–दमक के बीच हम अपने कृषि तथा परंपरागत कुटीर उद्योगों की तरफ ध्यान देते हुए व्यावसायिक शिक्षा को भी प्रोत्साहन दें।

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं।)
ई–मेल : bhagwatipande@yahoo.com

आपका मनीआर्डर अब तेजी से पहुंचेगा

डाक विभाग जल्द ही तेजी से रुपए भेजने के लिए इलैक्ट्रॉनिक प्रणाली का इस्तेमाल करने जा रहा है। इलैक्ट्रॉनिक मनीआर्डर (इएमओ) उन सभी डाकघरों में मिलेगा, जो डाकघर ब्रॉड बैंड इंटरनेट से जुड़े होंगे। मनीआर्डर फार्म पर पूर्व निर्धारित संदेश कोड होंगे और इन्हीं के माध्यम से रुपया भेजा जाएगा। साधारण मनीआर्डर की तरह ही इलैक्ट्रॉनिक मनीआर्डर पर समान शुल्क वसूला जाएगा और रुपए भेजने की सीमा भी वही होगी, जो साधारण मनीआर्डर की है। बहरहाल, साधारण घरेलू मनीआर्डर सेवा भी पहले के समान ही चलती रहेगी। (पसूका)

प्रौढ़ शिक्षा के जरिए ग्रामीण महिलाओं का विकास

श्रीनित्या मालवीया

प्रत्येक विकसित समाज के निर्माण में स्त्री एवं पुरुष दोनों की सहभागिता आवश्यक है। परन्तु यह एक विडम्बना ही है कि समाज में उन्हें समानता का स्तर शायद ही कभी प्राप्त हुआ है। देश के संविधान में यह व्यवस्था की गयी है कि राज्य किसी भी नागरिक के विरुद्ध धर्म, वंश, लिंग, जाति, जन्मस्थान अथवा अन्य किसी भी आधार पर विभेद नहीं करेगा। इससे महिलाओं को शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति के समान अवसर उपलब्ध तो होने लगे, लेकिन सदियों से शैक्षिक रूप से पिछड़ी दशा में रही महिलाओं को पुरुषों के समान लाना अभी भी सम्भव नहीं हो सका है। अभी भी लगभग आधी महिलाएं अशिक्षित हैं। दाताओं और अन्तर्राष्ट्रीय बैंकों द्वारा प्रदत्त सहायता से सामाजिक–आर्थिक विकास में भारी सरकारी निवेश के बावजूद विश्व में दो–तिहाई निर्धनों में विशेषकर महिलाओं की एक बड़ी संख्या निरक्षर है। 2001 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या लगभग 1,02,87,37,436 है, जिसमें 53,22,23,090 पुरुष और 49,65,14,346 महिलाएं हैं तथा आबाद गांवों की संख्या 5,93,732 है, जिसमें ग्रामीण जनसंख्या 74,26,17,747 है। अर्थात् 72 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है। अब अगर साक्षरता स्थिति पर नजर डाले तो कुल साक्षर व्यक्ति 56,06,87,797 (64.8% साक्षरता दर), जिसमें 33,65,33,716 पुरुष (75.2%) एवं 22,41,54,081 महिलाएं (53.67%) हैं।

तालिकाओं में अंकित आंकड़ों से स्पष्ट है कि पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं की साक्षरता समस्या अभी भी अधिक विकट है। इस समस्या के समाधान हेतु भले ही गत 60 वर्षों से सरकार ने अनेक प्रयास किये हैं तथा शिक्षण संस्थाओं में वृद्धि हुई है, परन्तु आज भी 15 से 35 आयु–वर्ग की अधिकांश नारियां निरक्षर अथवा अशिक्षित हैं।

भारत में साक्षरता दर : 1951–2001

वर्ष	व्यक्ति (प्रतिशत में)	पुरुष (प्रतिशत में)	महिला (प्रतिशत में)
1951	18.33	27.16	8.86
1961	28.31	40.40	15.34
1971	34.45	45.95	21.97
1981	43.56	56.37	29.75
1991	52.21	64.13	39.29
2001	65.38	75.85	54.16

भारत में लिंग विभेद–साक्षरता दर : 1961–2001

वर्ष	आयु वर्ग	साक्षरता दर (पुरुष) (प्रतिशत में)	साक्षरता दर (महिला) (प्रतिशत में)	महिला–पुरुष साक्षरता दर में अन्तर (प्रतिशत में)
1961	5+	40.40	15.34	25.06
1971	5+	45.95	21.97	23.98
1981	5+	53.45	28.46	24.99
1981	7+	56.37	29.75	26.62
1991	7+	75.85	54.16	21.70

ग्रामीण–नगरीय साक्षरता दर–जनगणना 2001

	व्यक्ति	पुरुष	महिला
सभी क्षेत्र	566.71 (65.20%)	339.91 (75.64%)	226.79 (54.03%)
ग्रामीण क्षेत्र	366.67 (59.21%)	226.27 (71.18%)	140.39 (46.58%)
नगरीय क्षेत्र	200.03 (80.06%)	113.63 (86.42%)	86.39 (72.99%)

इस समस्या के समाधान के लिए भारत सरकार के शिक्षा एवं समाज कल्याण मन्त्रालय ने प्रौढ़ शिक्षा की एक योजना बनायी, जो वर्तमान में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के तहत कार्यरत है। वास्तव में यह योजना विशेष महत्व की है क्योंकि अविकसित अथवा अर्द्धविकसित व्यक्ति स्वयं अपनी तथा समाज की कोई विशेष भलाई नहीं कर सकते हैं। यदि प्रौढ़ों को साक्षर एवं शिक्षित बनाने की इस योजना को ठोस रूप में क्रियान्वित किया जाए तो यह सम्भव है कि हम जिस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु इन योजनाओं को निर्मित व क्रियान्वित करते हैं, उसको प्राप्त कर सकेंगे।

हमारी संस्कृति में नारी समाज में पूजनीय एवं आदरणीय रही है। परिवार में यदि सुशिक्षित नारी है, तो वह अपने परिवार के प्रति अपना दायित्व पहचानने और निभाने के लिए जागरूक रहती है। वह समाज के सुधार के विषय में भी सोचती है, उसकी सन्तान अशिक्षित नहीं रहती है। अतः यदि आज हमें समाज की दशा सुधारनी है, तो नारी को शिक्षित बनाना होगा। इसके लिए नारी

नहीं आ रहा है – काश कोई पढ़ा देता

शिक्षा विशेष भूमिका अदा कर सकती है। ग्रामीण अंचलों में विकास की बात कही जाती है या अन्त्योदय का नारा लगाया जाता है, तो नारियों को हमें सर्वप्रथम साक्षर बनाना होगा। यदि प्रत्येक निर्धन परिवार की नारी साक्षर बना दी जाए, तो वह अपने परिवार तथा समाज के प्रति कर्त्तव्य–पालन हेतु सचेष्ट रहेगी। वह देश के बहुंमुखी विकास में सहभागी बनकर उसके लाभ की भागीदार बनने के लिए जागरूक होगी। अपनी सन्तति में शिक्षा के प्रति रुचि उत्पन्न करेगी तथा परिवार के रहन–सहन के स्तर को स्वतः ऊंचा उठाने का प्रयास करेगी।

महिलाओं के साक्षर होने से समाज में कायाकल्प होने की परिकल्पना की गई है। जो महिलाएं आयु की दृष्टि से परिपक्व हैं, परन्तु किन्हीं कारणों से या तो उन्हें प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य नहीं मिला है अथवा उन्होंने अधूरी प्राथमिक शिक्षा प्राप्त की है ऐसी नारियां अन्धविश्वासों एवं समाज के अव्यावहारिक रीति–रिवाजों तथा कुप्रथाओं के जाल में फंसी हुई हैं, जिसका प्रभाव उनकी सन्तति पर भी पड़ रहा है, जोकि समाज और देश के हित में नहीं है। भारतीय पर्यावरण में, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, नारियों को कई प्रकार की आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं शैक्षणिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं के निवारणार्थ प्रौढ़ शिक्षा एक सार्थक कदम सिद्ध हो सकता है क्योंकि वस्तुतः इन सभी समस्याओं के मूल में शिक्षा का अभाव भी एक मूल कारण है। इन समस्याओं के निराकरण में प्रौढ़ शिक्षा मददगार हो सकती है।

आर्थिक समस्या : रूढ़िगत परम्पराओं में जकड़ी हुई नारियां आज भी अपने खान–पान और रहन–सहन के स्तर को ऊंचा उठाने के निमित्त जागरूक नहीं हैं। वे अपने पैतृक व्यवसाय के तौर–तरीके बदलना नहीं चाहती। इनमें से अधिकांश भूमिहीन मजदूरों तथा कमजोत वाले कृषक परिवारों की नारियों की दशा अत्यन्त दयनीय है। उन्हें पर्याप्त मात्रा में भोजन और वस्त्र भी उपलब्ध नहीं हैं, वे पीढ़ियों से गुलामी की जंजीरों से जकड़ी हुई हैं। ऐसी परिस्थितियों में महिला प्रौढ़ शिक्षा अभियान चलाना कठिन अवश्य है परन्तु इसको क्रियान्वित करना और आवश्यक हो जाता है। सर्वप्रथम इन नारियों को सहानुभूति व आदर के साथ साक्षर बनाने के लिए प्रेरित करने की आवश्यकता हैं। इनकी रुचियों, क्षमताओं, आकांक्षाओं और समय की लचीली अवधि का विशेष ध्यान रखना होगा। स्वैच्छिक या प्रशासनिक संगठनों के द्वारा 'महिला प्रौढ़ शिक्षा' के कार्य को आगे बढ़ाने के लिए इस नारी समाज के विभिन्न पहलुओं का सर्वेक्षण करना अत्यन्त आवश्यक है।

ग्रामों में शिक्षित तथा अर्द्धशिक्षित महिलाएं यदि प्रौढ़ शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार के लिए आगे आएं, तो उनके द्वारा भी महिला समाज को कार्यात्मक साक्षरता की योजना से लाभान्वित किया जा सकता है। सिलाई, कढ़ाई, बुनाई, स्थानीय अन्य कुटीर उद्योगों का यदि साक्षरता के साथ–साथ प्रशिक्षण दिया जाए, तो इससे समाज के इस वर्ग की आर्थिक समस्या का निदान सम्भव है।

सामाजिक समस्या : आज अशिक्षित ग्रामीण समाज में नारी का स्थान पुरुषों की अपेक्षा निम्न कोटि का है। नारी की अपनी आकांक्षा, इच्छा एवं रुचि की इस समाज में पुरुषों के द्वारा अवहेलना की जाती है। पिछड़े हुए तथा रूढ़िवादी ग्रामीण परिवारों में स्त्रियों को शिक्षित करना भी कहीं–कहीं अच्छा नहीं माना जाता। इसके साथ ही समाज में अन्य कुरीतियां जैसे–कन्या भ्रूण हत्या, कन्या शिशु हत्या, डायन का आरोप, छुआछूत, बाल–विवाह, दहेज प्रथा इत्यादि भी विद्यमान हैं। जहां सम्पन्न एवं प्रतिष्ठित वर्ग की नारियां देश की बहुंमुखी प्रगति में नेतृत्व प्रदान कर रही हैं, वहां इन ग्रामीण नारियों पर यह अमानवीय अंकुश। अतः आवश्यकता है कि प्रौढ़ शिक्षा द्वारा इन कुप्रथाओं को समाप्त कर नारियों में उनके कर्त्तव्यों और अधिकारों के प्रति जागरुकता लानी होगी। इस जागरुकता से वे अपनी रुचियों, आवश्यकताओं और क्षमताओं के अनुरूप कार्य करके अपने सामाजिक स्तर को ऊंचा उठाने के लिए प्रयास करेंगी। अतः सामाजिक समस्या, जो नारियों के

उत्थान में बाधक बनी हुई है, उसका हल भी प्रौढ़ शिक्षा के सुनियोजित कार्यक्रम के क्रियान्वयन से हो सकता है।

राजनैतिक समस्या : आज निर्धन ग्रामीण परिवारों में अधिकांश स्त्री–पुरुष राजनैतिक गतिविधियों से अनभिज्ञ रहते हैं। यहां तक देखा गया है कि राष्ट्र विकास में प्रौढ़ अशिक्षित महिलाएं किस प्रकार बाधक हैं क्योंकि जब इन ग्रामीण अंचलों में विभिन्न राजनैतिक दल चुनाव अभियान के निमित्त जाते हैं, तो राजनैतिक चेतना के अभाव में ये भोलीभाली अशिक्षित नारियां बड़े–बूढ़ों के संकेत पर ही बिना सोचे–समझे मतदान के अधिकार का दुरुपयोग कर देती हैं। उनमें यह भी बोध नहीं होता कि उनके मत का क्या महत्त्व है? उनके कर्त्तव्य और अधिकार क्या हैं, उनके मतदान से देश की राजनीति पर क्या प्रभाव पड़ेगा? यही कारण है कि आज कतिपय अवसरवादी राजनीतिज्ञ इस अशिक्षित नारी समाज को धोखे में रखकर अपना उल्लू सीधा कर लेते हैं। यही नहीं पंचायती राज व्यवस्था के तहत यदि कोई महिला चुनी जाती है तो अशिक्षित होने या कर्त्तव्यों एवं अधिकारों की अनभिज्ञता के कारण कठपुतली के समान पुरुषों की बातों को सुनने व करने को बाध्य हो जाती है। अतः आज आवश्यकता है – प्रौढ़ शिक्षा के माध्यम से साक्षर कराने के साथ ही साथ उन्हें उनके कर्त्तव्यों, अधिकारों के साथ राजनैतिक विषय–वस्तु से अवगत कराने की जिससे इस अशिक्षित महिला समाज का लाभ हो सके। इस दिशा में शिक्षित एवं राजनीति में रुचि रखने वाली नारियां आगे आएं और गांव–गांव जाकर इन ग्रामीण नारियों में राजनैतिक चेतना जागृत करें।

चलो शुरुआत करें घर का काम भी करना है

शैक्षिक समस्या : आज भी गांवों में बालकों की अपेक्षा बालिकाओं के लिए विद्यालय कम ही हैं। रूढ़ियों एवं अंधविश्वासों के कारण जब माता–पिता स्वयं अपनी बालिकाओं को विद्यालय भेजना नहीं चाहते हैं, तो उस दशा में प्रौढ़ स्त्रियों को शिक्षा देने की बात करना उनके लिए कल्पनातीत ही है। ऐसे समाज में निश्चित रूप से प्रौढ़ महिलाओं में शिक्षा के प्रति अरुचि होना स्वाभाविक ही है। देश में अब तक जो प्रौढ़ पाठशालाएं चलाई गईं, उनमें अधोलिखित तत्त्व बाधक रहे, जिन्होंने प्रौढ़ महिला शिक्षा के लक्ष्यों की प्राप्ति में व्यवधान उत्पन्न किया : अनुपयोगी पाठ्यक्रम, दोषपूर्ण अध्ययन पद्धति, पर्याप्त शैक्षिक पर्यावरण का अभाव, उपयुक्त साहित्य एवं रोचक सहायक सामग्री का अभाव, अप्रशिक्षित अध्यापक, धन की कमी, मानदेय का कम होना, परस्पर सहयोग का अभाव, पाठशालाओं के लगने का समय, पाठशाला का स्थान, उत्तरदायित्वों की कमी, महिला अध्यापिकाओं की कमी, आदि–आदि।

इन समस्याओं के समाधान हेतु यदि स्थानीय शिक्षित एवं अर्द्धशिक्षित महिलाओं को प्रौढ़ साक्षरता के कार्यक्रम को चलाने का प्रशिक्षण दिया जाए, तो वे अपने महिला समाज की अधिक सेवा कर सकेंगी। इसके अतिरिक्त उत्साही अध्यापिकाएं तथा छात्राएं भी इस कार्य में अपनी विशेष भूमिका निभा सकती हैं।

तत्सम्बन्धी प्रौढ़ शिक्षा से तात्पर्य उन महिलाओं को साक्षर बनाने से है, जो 15–35 के आयु वर्ग में आती हैं। यहां साक्षर बनाने से तात्पर्य सिर्फ अक्षर ज्ञान कराने से नहीं है। वास्तव में प्रौढ़ शिक्षा प्रौढ़ों को उनकी समस्याओं का हल ढूंढने में सहायता प्रदान करती है और साथ ही उन्हें एक जागरुक नागरिक बनाने में योगदान देती है। अर्थात् समाज में जो वयस्क स्त्री–पुरुष हैं, उन्हें हर तरह से कार्यकुशल, कर्मठ एवं श्रमशील बनाना, समाज के एक–एक सदस्य को नागरिकता की जानकारी देना, देश–दुनिया की गति से परिचित कराना और उन्हें

स्वस्थ, सबल, समृद्धि–सम्पन्न जीवन–प्रणाली को अपनाने की क्षमता प्रदान करना ही प्रौढ़ शिक्षा है। अतः प्रौढ़ शिक्षा एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा ग्रामीण महिलाएं अपने अस्तित्व के बचाव के साथ ही साथ विकास भी कर सकती हैं। आवश्यकता है कि प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों पर प्रौढ़ों की रुचियों के अनुरूप विशिष्ट पाठ्यक्रम के साथ ही मनोरंजन का भी प्रबन्ध करना पड़ेगा। रेडियो, सिनेमा, भाषण, नाटक, त्यौहार, राष्ट्रीय दिवसों पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन, मेला, लोकगीत, भजन–कीर्तन आदि के द्वारा हम प्रौढ़ महिलाओं का काफी मनोरंजन कर सकते हैं और उन्हें अनौपचारिक रूप से शिक्षा भी प्रदान कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त भी कुछ ऐसे बिन्दु हैं, जिन पर विशेष ध्यान देना होगा; यथा–

- अशिक्षित प्रौढ़–महिलाओं की स्थानीय आवश्यकताओं एवं पर्यावरण को दृष्टि में रखकर प्रौढ़ शिक्षा का कार्यक्रम बनाया जाए।
- कार्यक्रम लचीला हो–समय, अवधि, कार्यकाल, स्थान एवं शिक्षण–व्यवस्था सम्बन्धी कठोर नियम न हों। व्यावहारिक दृष्टि से कार्यक्रम रोचक एवं सुविधाजनक हो।
- प्रौढ़ महिलाओं के घरेलू क्रियाकलापों से सम्बन्धित विविध विषयों को पाठ्यक्रम में समुचित स्थान दिया जाए। सीखने–सिखाने सम्बन्धी रोचक सहायक सामग्री एवं शिक्षण–विधियों का प्रयोग किया जाए।
- इस कार्यक्रम की रूपरेखा प्रत्येक दृष्टि से सुसंगठित एवं सुव्यवस्थित बनाई जाए।

परन्तु आवश्यकता तो अस्तित्व के बचाव व सुरक्षा की है और इसके लिए यह नितान्त महत्वपूर्ण है कि प्रौढ़ महिलाओं को अक्षर ज्ञान कराया ही जाए ताकि वे स्वाध्याय की ओर प्रेरित होकर जीवन को सार्थक एवं समाजोपयोगी बना सकें। साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिए कि उनकी शिक्षा उनके जीवन एवं कार्यक्षेत्र, व्यवसाय, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि आदि के साथ समीकृत की जाती रहे। ताकि व्यावसायिक दृष्टिकोण से जिस भी कार्य में वे संलग्न हो, उसमें उनकी क्षमता एवं दक्षता निरन्तर बढ़ती रहे और व्यक्तिगत रूप से भी वे स्वाध्याय की ओर प्रेरित होकर चिन्तन एवं मनन द्वारा अपना पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन अधिक सुखी एवं सम्पन्न बना सकें और इस प्रकार राष्ट्र के पुनर्निर्माण एवं विकास में पर्याप्त रूप से सहायता दे सकें। ऐसा होना तभी सम्भव है जबकि प्रौढ़ शिक्षा के दर्शन को समझते हुए इसे अनौपचारिक ढंग से दिया जाए, उसकी शिक्षण–विधि एवं पद्धति परम्परागत रूढ़ियों से मुक्त हो, उसका पाठ्यक्रम जीवन और जीवन के सभी अंगों से समीकृत हो। उसकी पाठ्य सामग्री देश, काल, पात्र के अनुरूप और उपलब्धि की दृष्टि से सहज प्राप्त हो तथा प्रौढ़ शिक्षक एवं शिक्षिकाओं और प्रौढ़ महिलाओं के सम्बन्ध पारस्परिक आनन्द प्रदान के तथा सहज एवं सुखद हो। यह भी आवश्यक है कि इस समूह के भीतर उन प्रेरक तत्वों को उद्भाषित किया जा सके, जो मानव में ज्ञान पिपासा जागृत करने के आधार हैं। ऐसा कर पाने पर महिलाएं स्वयं ही शिक्षा की प्रक्रिया को समुचित ढंग से आगे बढ़ाने में स्वेच्छा से सहायक हो सकेंगी। इतने बड़े देश में, जहां भाषा, रीति–रिवाज, परम्पराओं आदि में वैभिन्य दृष्टिगोचर होता है, यह कार्य कठिन अवश्य जान पड़ता है, पर इसमें कोई सन्देह नहीं कि असंख्य लोगों को निरक्षर एवं अशिक्षित रखकर इस महान देश के कुछ एक साक्षर और शिक्षित व्यक्ति बुद्धि में कितने भी अधिक कुशाग्र और हृदय से कितने भी विशाल और क्षमता की दृष्टि से कितने भी अधिक सामर्थ्यवान क्यों न हों, देश का सम्पूर्ण पुनर्निर्माण नहीं कर पाएंगे। अतः राष्ट्र को किसी भी मूल्य पर इस विशाल देश के सभी वासियों को साक्षर और शिक्षित करना ही होगा और यही उचित भी है। आशा है कि यदि आज सभी शिक्षाविद् और शिक्षित व्यक्ति समाज में पूरी लगन से जुट जाएं, तो वह दिन दूर नहीं, जब संपूर्ण देशवासी साक्षरों की श्रेणी में आएंगे।

(लेखिका महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी के समाजकार्य विभाग में शोध छात्रा हैं।)

ई–मेल : nityasm@yahoo.co.in

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम के लिए राष्ट्रीय हेल्पलाइन सेवा शुरू

ग्रामीण विकास मंत्रालय ने राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (एनआरईजीए) को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए राष्ट्रीय हेल्पलाइन सेवा शुरू कर दी है। हेल्पलाइन का नम्बर है– 1800 110707। इस नम्बर पर एनआरईजीए के तहत कार्य करने वाले परिवार, मजदूर और अन्य व्यक्ति तथा समूह अपनी शिकायत दर्ज कर सकते हैं या जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इस हेल्पलाइन पर की गई शिकायतों को मंत्रालय संबंधित स्थानीय एनआरईजीए अधिकारियों के पास त्वरित कार्रवाई के लिए भेज देगा और उस पर की गई कार्रवाई से मंत्रालय को अवगत कराने को कहेगा।

चूंकि ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम को राज्यों के माध्यम से लागू किया जा रहा है, इसलिए राज्य और जिला स्तर पर भी हेल्प– लाइन सेवा शुरू करने और उसके प्रबंधन के लिए कर्मचारी तैनात करने के लिए राज्य सरकारों से कहा गया है। (पसूका)

अनुसूचित जाति एवं जनजाति की शिक्षा का प्रयास व परिणाम

बैजनाथ पाण्डेय

शिक्षा मानव विकास का मूल साधन है। शिक्षा के जरिए मनुष्य के ज्ञान एवं कला–कौशल में वृद्धि करके उसके पैदाइशी गुणों को निखारा जाता है और उसके व्यवहार को परिमार्जित किया जाता है। शिक्षा सही मायनों में व्यक्ति को परिमार्जित करती है और उसके बुद्धि, बल और विवेक को उत्कृष्टता प्रदान करती है। शिक्षा के अभाव में मनुष्य का जीवन पशुवत प्रतीत होता है। इसी कारण भारत ने शिक्षा के लोकव्यापीकरण का लक्ष्य रखा है। आजादी के बाद से ही शिक्षा के लोकव्यापीकरण के लिए प्रयास किया जाता रहा है। संसद में तीन बार राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968,1986,1992) के दस्तावेजों में 6–14 आयु समूह के सभी बच्चों को शिक्षा उपलब्ध कराने का संकल्प दोहराया गया है लेकिन आंज भी देश के 6–13 आयु समूह के 19.4 करोड़ बच्चों में से 6.64 प्रतिशत बच्चे स्कूल से दूर हैं। स्कूल से विरत बच्चों में 68.3 प्रतिशत कभी स्कूल गये ही नहीं और 31.7 प्रतिशत बच्चे स्कूल में बने न रह सके।

शिक्षा के लोकव्यापीकरण अर्थात् पूर्ण साक्षरता के लक्ष्य को तभी हासिल किया जा सकता है जबकि भारतवर्ष में रहने वाले सभी वर्गों को साक्षर किया जाए। भारत भौगेलिक एवं जनसंख्या की दृष्टि से एक विशाल देश है। इसमें भिन्न–भिन्न आर्थिक स्तर, सामाजिक स्तर के लोग रहते हैं। भारत का एक बड़ा जनसमूह तो पहाड़ों और जंगलों में निवास करता है। भारत को पूर्ण साक्षर बनाने के लिए उन आर्थिक रूप से कमजोर एवं दुर्गम इलाकों में रहने वाले, सामाजिक रूढ़िवादिता की जंजीरों से जकड़े एक लम्बे समय से तिरस्कृत वर्ग को साक्षर बनाना होगा। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जाति की साक्षरता 54.69 प्रतिशत और अनुसूचित जनजातियों की साक्षरता 47.10 प्रतिशत थी जो कि भारत की कुल साक्षरता 64.84 प्रतिशत से काफी कम है। भारत के कुछ बड़े राज्यों के अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की साक्षरता दर तालिका में दी गई है।

इस अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाओं की साक्षरता तो और भी शोचनीय है। कुछ बड़े राज्यों की अनुसूचित जाति की महिलाओं की साक्षरता दर 21 प्रतिशत है जबकि बिहार में 15.58 प्रतिशत, झारखण्ड में 22.55 प्रतिशत, उत्तर प्रदेश में 30.50 और राजस्थान में 33.87 प्रतिशत। बिहार की अनुसूचित जनजातियों की महिलाओं की साक्षरता तो मात्र 15.54 प्रतिशत ही है।

यह सर्वविदित है कि इन वर्गों की शिक्षा के लिए विशेष संरक्षण एवं व्यवस्था उपलब्ध करानी होगी तभी ये सामाजिक रूढ़िवादिता

साक्षरता दर

राज्य	अनुसूचित जाति	अनुसूचित जनजाति
आन्ध्र प्रदेश	53.52	37.04
असम	66.78	62.52
बिहार	28.47	28.17
जम्मू एवं कश्मीर	59.03	37.46
कर्नाटक	52.87	48.27
मध्य प्रदेश	58.57	41.16
महाराष्ट्र	71.90	55.29
उड़ीसा	55.53	37.37
पंजाब	56.22	....
राजस्थान	52.24	44.66
तमिलनाडु	63.19	41.53
उत्तराखण्ड	46.27	35.13
उत्तर प्रदेश	63.40	63.23
पश्चिम बंगाल	59.04	43.40

- **वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार**

की जंजीरों को तोड़कर, आर्थिक समस्याओं से जूझकर और दुर्गम इलाकों में रहकर पूर्ण साक्षरता के लक्ष्य को प्राप्त कर सकेंगे। भारत के युगपुरुष स्वतन्त्रता की लड़ाई के साथ–साथ इनके उत्थान के लिए भी संघर्ष करते रहे और आजाद भारत के संविधान में इनकी शिक्षा के लिए विशेष व्यवस्था की गयी। भारतीय संविधान की प्रस्तावना, जिसे संविधान की आत्मा कहा जाता है, में भी सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय और अवसर की समता की बात कही गयी है। समता का अर्थ है विभेदात्मक संरक्षण द्वारा समानता को प्राप्त करना। संविधान के अनुच्छेद 15 में धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग व जन्म स्थान के आधार पर कोई भेदभाव किसी भी भारतीय नागरिक के साथ नहीं बरता जायेगा। अनुच्छेद 16 में सरकारी नौकरियों में अनुसूचित जाति व जनजाति के लिए विशेष सुविधाएं सुरक्षित स्थानों के रूप में होगी। अनुच्छेद 28 में शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश के मामले में कोई भेदभाव किसी के साथ नहीं बरता जाएगा, अनुच्छेद 46 में इन जातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों की रक्षा और उनका सभी प्रकार के शोषण और सामाजिक अन्याय से बचाव का प्रावधान है। अनुच्छेद 146 में इनके लिए संस्थाओं को खोलने पर बल दिया गया है। अनुच्छेद 244 में अनुसूचित जातियों के लिए प्रशासन सम्बन्धी विशेष व्यवस्था की गयी है। अनुच्छेद 330 व

अनुच्छेद 335 द्वारा संसद और विधानमण्डलों में अनुसूचित जातियों के विशेष प्रतिनिधित्व के लिए प्रावधान किया गया है। इतना ही नहीं भारतीय संविधान के 86वें संशोधन द्वारा 6–14 आयु वर्ग के बालकों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को मूल अधिकार बनाया गया है। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 51 ए में संशोधन करके अनुच्छेद 51 जोड़ा गया है जिसके द्वारा अभिभावकों को 6–14 आयु वर्ग के बालकों की शिक्षा के लिए अवसर उपलब्ध कराने का दायित्व सौंपा गया है।

इन संवैधानिक प्रावधानों को साकार करने एवं पूर्ण साक्षरता के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अभी तक का सबसे बड़ा एवं व्यापक कार्यक्रम 'सर्वशिक्षा अभियान' नवम्बर 2000 में प्रारम्भ किया गया। 'सर्वशिक्षा अभियान' कार्यक्रम केन्द्र एवं राज्य का साझा कार्यक्रम है जिसमें 6–14 आयु वर्ग के सभी बच्चों के लिए वर्ष 2010 तक गुणवत्तायुक्त उपयोगी एवं प्रासंगिक प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करके पूर्ण साक्षरता का लक्ष्य रखा गया है। साथ ही 2007 तक बुनियादी स्तर पर सामाजिक एवं लैंगिक अन्तर को मिटाने का लक्ष्य तथा 2010 तक पूर्णतः समाप्त करने का लक्ष्य रखा गया है। इस अभियान में पहले से चलाये जा रहे कार्यक्रम ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड, महिला सामाख्या, शिक्षा गारण्टी योजना तथा वैकल्पिक एवं अभिनव शिक्षा, जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, लोक जुम्बीश योजना आदि को शामिल कर लिया गया है। इस अभियान में अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की शिक्षा के लिए निम्न बातों पर ध्यान दिया गया है–

- विद्यालयी आवश्यकता की पूर्ति के लिए सामुदायिक संगठनों (अनुसूचित जाति एवं जनजाति समुदाय के) को भी शामिल किया गया है।
- विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए विशेष शिक्षण की व्यवस्था की गयी है।
- अनुसूचित जाति एवं जनजाति के समुदायों को उनकी शिक्षा के लिए दायित्व का बोध कराया गया है।
- स्कूलिंग प्रेरणा के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं।
- स्कूल जहां उपलब्ध नहीं हैं, वहां वैकल्पिक शिक्षा की व्यवस्था की गयी है।
- सामुदायिक शिक्षक द्वारा शिक्षा की व्यवस्था की गयी है।
- विद्यालय प्रबन्धन में इस वर्ग के नेताओं को भी शामिल किया गया है।

इतना ही नहीं 'सर्वशिक्षा अभियान' में इन वर्गों की शिक्षा के लिए निम्न प्रावधान किया गया है–

- सभी बस्तियों से एक किलोमीटर दूरी तक स्कूल या शिक्षा गारण्टी योजना जैसी वैकल्पिक व्यवस्था का प्रबन्ध किया जायेगा।

अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति का कक्षावार नामांकन

ग्रामीण

	अनुसूचित जाति			अनुसूचित जनजाति		
कक्षा	बालक	बालिका	कुल	बालक	बालिका	कुल
1	2665057	2692588	5687685	1616008	1487613	3103621
2	2364386	2095490	4459879	1191326	1051139	2242465
3	2151301	1865554	4016855	1071660	883951	1655611
4	1607237	1625835	3533072	901627	723481	1625108
5	1743962	1433303	3177265	804859	615697	1420556

शहरी

	अनुसूचित जाति			अनुसूचित जनजाति		
कक्षा	बालक	बालिका	कुल	बालक	बालिका	कुल
1	629491	566303	1195794	147294	132609	280003
2	537768	488596	1026364	124653	111429	236082
3	515640	466354	981994	120798	106281	227079
4	481110	432735	913845	111296	98199	209495
5	484046	427073	911119	115158	99651	214809

- विशेष कैम्प का आयोजन करके शिक्षा गांरटी योजना को सामान्य विद्यालय में अपग्रेड किया जायेगा।
- महिला सामाख्या।
- वैकल्पिक विद्यालय के लिए विशेष मॉडल तैयार किया जायेगा।
- विद्यालय प्रबन्धन में सहयोग के लिए सामुदायिक नेताओं को प्रशिक्षण दिया जायेगा।
- कक्षा आठवीं तक इनको मुफ्त पुस्तकें दी जाएंगी।
- मिड–डे मील कार्यक्रम को जारी रखा जाएगा। अब इस कार्यक्रम का विस्तार कक्षा 8 तक कर दिया गया है।
- स्कूल ड्रेस एवं छात्रवृत्ति दी जायेगी।
- सभी प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्कूल में शिक्षण–अधिगम के लिए सहायक सामग्री की व्यवस्था की जायेगी।
- कम से कम 50 प्रतिशत शिक्षक पद पर महिलाओं की नियुक्ति होगी।
- शिक्षकों के लिए 20 दिन के सेवाकालीन प्रशिक्षण की व्यवस्था की जायेगी।
- विशेष जरूरतमन्द बच्चों के लिए विशेष व्यवस्था की जायेगी।

ऑल इण्डिया स्कूल एजुकेशन सर्वे, एनसीईआरटी के अनुसार 78.17 प्रतिशत बस्तियों में ही प्राथमिक विद्यालय की व्यवस्था है। आधे किलोमीटर की दूरी पर 6.69 प्रतिशत तथा एक किलोमीटर की दूरी पर कुल 94.17 प्रतिशत रिहायशी बस्तियों में प्राथमिक विद्यालय हैं। अनुसूचित जाति वाले 68.05 प्रतिशत प्राथमिक विद्यालय हैं। आधे किलोमीटर की दूरी पर 11.30 प्रतिशत एवं एक किलोमीटर की दूरी पर कुल 92.84 प्रतिशत बस्तियों में प्राथमिक विद्यालय हैं। जहां एक किलोमीटर पर विद्यालय नहीं हैं उनमें से 16.98 प्रतिशत के लिए वैकल्पिक विद्यालय हैं। अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या वाली 69.84 प्रतिशत बस्तियों में प्राथमिक विद्यालय हैं तथा आधे किलोमीटर की दूरी पर 07.01 प्रतिशत एवं एक किलोमीटर की दूरी पर 89.01 प्रतिशत बस्तियों में प्राथमिक विद्यालय हैं।

प्रयासों एवं परिणामों पर नजर डाली जाए तो आज तक भी शत–प्रतिशत नामांकन सुनिश्चित नहीं हो पाया है। कमी प्रयास में नहीं है बल्कि कमी या तो उसके क्रियान्वयन में है या फिर उसके प्रति वांछित वर्गों की निष्क्रियता में है। कार्यक्रम/योजनाएं कागजों पर तो बेहद आकर्षक लगती हैं लेकिन जब इन्हें वास्तविक मैदान में चलना पड़ता है तो ये थके घोड़े के समान हांफती हुई लगती हैं। तिथियां निर्धारित होती हैं लेकिन उन निर्धारित तिथियों की सीमा में ये कार्यक्रम कभी सफल होते नजर नहीं आते। जरूरत केवल बड़ी–बड़ी महत्वाकांक्षी योजनायें बनाने की नहीं बल्कि इसे सही ढंग से लागू करने की भी है तभी हम पूर्ण साक्षरता के लक्ष्य को प्राप्त कर सकेंगे और भारत के सभी वर्गों को जीवन की मुख्यधारा से जोड़ सकेंगे।

(लेखक शिक्षाशास्त्र विभाग, सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी में प्राध्यापक हैं।)

सदस्यता कूपन

मैं/हम **कुरुक्षेत्र** का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का (जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक .... दिनांक .... संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर निदेशक, प्रकाशन विभाग को नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) ....

पता ....

.... पिन ....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, तल–7, रामकृष्णपुरम,

नई दिल्ली–110 066

आदिवासी समाजः शिक्षा से वंचित हैं जो

कन्हैया त्रिपाठी

गांधीजी ने कहा था, "प्रजातंत्र का अर्थ यह मैं समझा हूं कि इस तंत्र में नीचे से नीचे और ऊंचे से ऊंचे आदमी को आगे बढ़ने का समान अवसर मिलना चाहिए"। 21वीं सदी में हम आजादी के 60 वर्ष पूरे करके भी क्या गांधी के उन सपनों को पूरा करने के करीब हैं, यह एक विचारणीय विषय है। 'नीचे से नीचे' में गांधी ने केवल 'हरिजन' या 'आर्थिक रूप से कमजोर लोगों' के विकास को सम्मिलित नहीं किया था बल्कि उनमें वे भी शामिल थे जो देशज या मूल निवासी के रूप में जाने जाते रहे। आदिवासी लोगों की जनसंख्या भारत में 8 करोड़ से अधिक है। दुनिया में 30 करोड़ आदिवासी समाज की आबादी में 8.2 करोड़ यानी भारत की कुल आबादी का लगभग 8 प्रतिशत की चिन्ता का सवाल है यहां पर, क्योंकि वे भी आखिर 'मनुष्य' है। ऐसे में, राज्य के उन सभी अधिकारों का हक उन मूल निवासियों/आदिवासी समाज को है जो मुख्यधारा के लोगों को राज्य प्रदान करता है। लेकिन अगर भारत में यह कहा जाए कि आदिवासियों (ट्रॉयबल) की स्थिति क्या है और आज वे किस पायदान पर खड़े हैं तो इसका ठीक–ठीक आकलन या उत्तर प्रस्तुत कर पाना सरल नहीं है क्योंकि आज भी हम उस देशज समाज को समझ पाने में सफल नहीं हो सके हैं। इसका प्रमुख कारण एक तो उनके जीवन जीने की खास जीवनशैली तथा दूसरे, क्षेत्र विशेष में रहने वाले समुदायों की अलग–अलग भाषा, मान्यताएं व संस्कृतियां उनके विकास में बाधक रही। शायद यही वजह है कि आज भी वे मुख्यधारा में सम्मिलित न हो सके और न किए जा सके।

ऐसा महसूस होता है कि मूलतः हमारी सोच में अगर किसी खास समुदाय के प्रति जब तक सम्मान या उसकी गरिमा का ख्याल नहीं, तब तक हम उस समुदाय के प्रति न्याय कर पाने में अक्षम ही हैं। दुनिया के मानवाधिकारवादियों ने यद्यपि यह महसूस किया कि 'इण्डीजेनस पीपुल्स' के मानवाधिकार के प्रश्न उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने मुख्यधारा के लोगों या स्वघोषित सभ्य समाज को मानवाधिकार का प्रावधान है।

> आदिवासी समाज की शिक्षा को ही हम लें तो आज भी वे शिक्षा से वंचित हैं। उत्पीड़ितों का शिक्षाशास्त्र (मेडागॉजी आफ द आप्रेस्ड) पुस्तक के लेखक एवं सुप्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री पालोओ फ्रेरे ने इस विषय पर 80 के दशक में अपने एक अध्ययन के दौरान चिंता व्यक्त की थी। फ्रेरे ने कहा था, "1976–77 में बस्तर के आदिवासियों में आधुनिक शिक्षा के अध्ययन के दौरान मैंने पाया कि प्रशासक से लेकर सवर्ण अध्यापक तक प्रायः इस विश्वास के थे कि यह जाहिल, जंगली जाति (आदिवासी) कभी सभ्य नहीं बन सकती। इनकी शिक्षा पर जो सरकार खर्च कर रही है वह सब व्यर्थ है" मुझे नहीं लगता कि 60 वर्ष बाद भी कुछ परिवर्तन आया हो इन आदिवासियों के संदर्भ में सोच को लेकर, क्योंकि गड़चिरोली जिले में आदिवासियों के संदर्भ में लगभग यही धारणा आज भी विद्यमान है।

भारत में आज भी अशिक्षित लोगों की संख्या लगभग 35 करोड़ के आसपास है, यह एक कड़वा सच है। भारत सरकार ने विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रमों द्वारा इस असमानता को दूर करने की पूरी कोशिश की। इसी का परिणाम है कि 1909 में भारत की साक्षरता दर 5.35 थी, आजादी के समय जो साक्षरता मात्र 18.3 प्रतिशत थी, वह इक्कीसवीं सदी की दहलीज पर खड़े भारत में बढ़कर 65.38 प्रतिशत हो गयी। हम सन् 2004 में ही 'एडू सैट' शैक्षिक उपग्रह प्रक्षेपित कर चुके हैं और 2008–09 के शैक्षिक बजट तथा ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत यह प्रत्याशा की जा रही है कि हमें बेहतर शैक्षिक उन्नयन प्राप्त होगा। यदि हम एक उदाहरण के रूप में सर्वशिक्षा अभियान को लें, तो हम सभी जानते हैं कि इसकी सिफारिश 1998 में राज्य के शिक्षा मंत्रियों द्वारा एक विशेष सम्मेलन में की गयी। ज्ञातव्य है कि इसका अनुमोदन भी 2004 में भारतीय संसद द्वारा किया गया और इस परियोजना का लक्ष्य भी वे 6–14 वर्ष के बच्चे हैं जो विज़न –2020 में भारत के युवा हैं। स्पष्ट है कि एक तरह से भारत को विकसित राष्ट्र की श्रेणी में ले जाने वाले ये बच्चे उस समय में देश के रीढ़ हैं। ध्यान देने योग्य है कि यह वही सर्वशिक्षा अभियान आन्दोलन है जिसमें बालिकाओं, अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों और कठिन परिस्थितियों में रहने वाले बच्चों की शैक्षणिक आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान देने की प्रतिबद्धता दर्ज की गयी है, किन्तु खेदजनक यह है कि इससे जो प्रत्याशा की गयी है और जो लक्ष्य रखे गये हैं वे कहीं न कहीं ऐसे दीमक के शिकार हो गए हैं जिनसे स्वप्न कुंद होने की सम्भावनाएं बढ़ गयी हैं।

महाराष्ट्र राज्य का विदर्भ क्षेत्र, जिसमें गड़चिरोली जिले के आदिवासी समाज की कुछ ऐसी ही स्थिति है। यहां इस जिले की कुल जनसंख्या की लगभग दो तिहाई आबादी आदिवासियों की है। माड़िया जाति के कुछ आदिवासी समाज जो यह भी नहीं जानते कि आदिवासियों के लिए सरकार द्वारा सर्वशिक्षा अभियान कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं। माना कि यहां की मूल भाषा माड़िया है और ये मराठी या हिन्दी को जानते तक नहीं। किन्तु

स्थानीय स्तर पर जो कुछेक स्वयंसेवी, प्रकल्प कार्य कर रहे हैं वे भी इन्हें शिक्षित या साक्षर नहीं बना सके। यहां का जिला स्तरीय दफ्तर तो मात्र फाइलें ठीक करने की मुहिम तेज किए हुए हैं बजाय इसके कि आदिवासी समाज के बीच शिक्षा की येन केन प्रकारेण ज्योति जलाए। यवतमाल, वर्धा, चंद्रपुर, गोविंदा तथा अन्य जिलों में भी ऐसे आदिवासी समुदाय हैं जो शिक्षा से अभी भी वंचित हैं। नहीं फूट सकी है शिक्षा की कोई किरण इनके बीच–जो चौंका देने वाली बात है, किन्तु हकीकत है।

सरकार ने काफी अरसा पहले ही अक्षर ज्ञान से लेकर गुणवत्तायुक्त शिक्षा की व्यवस्था की। वर्ष 2006–07 के बजट में ही दलित आदिवासी तथा अल्पसंख्यक बालिकाओं की शिक्षा के लिए एक हजार स्कूल खोलने का प्रावधान किया। मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अलावा महिला एवं बाल विकास, सामाजिक न्याय व अधिकारिता मंत्रालय तथा आदिवासी मंत्रालय भी अपनी विविध योजनाओं के साथ खड़े हैं क्योंकि जो विकास का लक्ष्य विज़न–2020 रखा गया उसको प्राप्त करने का मुख्य पथ शिक्षा ही है और इस बात का सबको एहसास है।

विचारणीय यह भी है कि इसमें सबसे ज्यादा हानि है आदिवासी महिला व बच्चों की क्योंकि क्षेत्र विशेष में रहने वाली यह आदिवासी जातियां अपने बच्चों व महिलाओं को लेकर सचेत नहीं हैं। यहां के एक आदिवासी (माड़िया भाषाभाषी) से जब मैंने एक शोध परियोजना कार्य के दौरान यह प्रश्न किया कि अपने बच्चों को शिक्षा के लिए स्कूल क्यों नहीं भेजते तो उसका जवाब था कि देवता हमें खुद ज्ञान (शिक्षा) देता है, हमारे देवता हमें सब सिखा देते हैं। इसे जब द्विभाषिए से जाना तो आश्चर्यजनक लगा। इससे यह पता चलता है कि देवी–देवताओं में विश्वास करने की वजह से शिक्षा के महत्व का अभी इन्हें ज्ञान नहीं। इसके रहन–सहन, सामाजिकी से यह महसूस होता है कि शिक्षा की पहल से पहले यह जरूरी है कि इन्हें जागरूक किया जाए। इन्हें मानसिक रूप से तैयार किया जाए और फिर इनकी व्यवस्थित शिक्षा की व्यवस्था संचालित व उपलब्ध हो। यह एक सत्य है कि जंगलों में बसने वाले बनवासी लोगों को आखेट करना और अपने खास नृत्य तथा संगीत से मनोरंजन इत्यादि के माध्यम से संतुष्टि मिलती है। किन्तु अपने को 'सभ्य समाज' घोषित करने वाले लोग, जो इनके शिक्षित न होने की वजह हैं 'अभिशाप समाज' समझते हैं। ऐसी खाइयों को मिटाना आवश्यक है। इनके आर्थिक प्रश्नों पर विचार करने की आवश्यकता है।

आवश्यकता इस बात की भी है कि सरकार आदिवासी समाज की भावना व गरिमा को ख्याल में रखकर ऐसी योजनाएं निर्मित करे जिससे आदिवासी समाज में शिक्षा का भरपूर विस्तार हो सके क्योंकि यह सवाल केवल माड़िया आदिवासी या विदर्भ में रहने वाले आदिवासी का नहीं है बल्कि देश के आदिवासी समाज लगभग 8.2 करोड़ की आबादी के शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक उन्नयन का है, विकास का है।

यद्यपि केंद्र सरकार ने शिक्षा के लिए ही अनुसूचित जनजाति की लड़कियों/लड़कों की छात्रावास योजना (1990–92) संचालित की तथा 14 जनजातीय अनुसंधान संस्थानों को अनुदान दिए जाने का प्रावधान किया। गैर–सरकारी संस्थानों को सहायता प्रदान करने हेतु 1953–54 में ही योजनाओं को गति देकर शैक्षिक स्तर ऊंचा करने की कोशिश की। वर्ष 1993–94 में राज्यों के कुल 136 जिलों को 10 प्रतिशत से कम साक्षरता वाले जिले के रूप में चिन्हित किया। जनजातीय क्षेत्रों में, सरकार ने 1992–93 में व्यावसायिक प्रशिक्षण आरम्भ किया, और मैनेजमेंट, मेडिसिन, इंजीनियरिंग की पढ़ाई डिग्री स्तर पर 127 संस्थानों में प्रारम्भ की गई मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्ति की स्कीम से लेकर उच्च शिक्षा में राजीव गांधी फैलोशिप आदि अनेक प्रावधान किए किन्तु जमीनी स्तर पर जो कार्य जिला मॉनीटरिंग एजेंसीज द्वारा होते हैं वहां कार्य से जरूर असंतोष है क्योंकि यदि आदिवासी समाज अपने शिक्षा के अधिकार व महत्व को अब तक नहीं जान पाया तो कोई न कोई दोषी जरूर है।

8 सितम्बर, 2007 को अन्तर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस के उपलक्ष्य में देश की प्रथम महिला राष्ट्रपति महामहिम प्रतिभा देवीसिंह पाटील ने गांधीजी को याद करते हुए कहा था, "शिक्षा और साक्षरता का भारत के लिए बहुत अधिक महत्व है। इसे जानते हुए और आजादी से पहले की उच्च निरक्षरता दर को ध्यान में रखते हुए महात्मा गांधी ने कहा था, 'अशिक्षा हमारे देश के लिए पाप और कलंक है, इसे समाप्त करना चाहिए।" और इसके अलावा शिक्षाविद् एवं भारतीय गणराज्य के पूर्व राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने भी कहा था, "जो राष्ट्र समय के नव्य विकास के प्रति जागरूक नहीं रहे, वे प्रगति की दौड़ में पिछड़ जाते हैं।" अतः यदि गांधीजी के शब्दों में, अधिकार व कर्तव्य का हमें बोध हो जाए तो ऐसा विश्वास किया जा सकता है कि 'शिक्षा से वंचित हैं जो' वे भी मुख्यधारा में शामिल हो सकते और वे भी शिक्षित बनकर विकसित भारत बनाने की संकल्पना को साकार करने में योगदान देते। यह अगर होता है तो ऐसा कहने में कोई संकोच नहीं होगा कि यही शैक्षिक क्रांति है, जो विकास का मूलधार है।

(लेखक महात्मा गांधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय से सम्बद्ध शोध एवं अध्यापन कार्य में रत हैं।)

ई–मेलः kanhaiyatripathi@yahoo.co.in

प्राथमिक शिक्षा में मिड-डे मील कार्यक्रम की प्रासंगिकता

डॉ. घनश्याम द्विवेदी

यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि शिक्षा किसी भी व्यक्ति और समाज के लिए विकास की धुरी है और यह किसी भी राष्ट्र की प्राणवायु है। बिना इसके सभी बातें अधूरी साबित होती हैं। शिक्षा का संबंध सिर्फ साक्षरता से ही नहीं है बल्कि शिक्षा चेतना और उत्तरदायित्वों की भावना को जागृत करने वाला औजार भी है। किसी राष्ट्र का भविष्य उसके द्वारा हासिल किए गए शैक्षिक स्तर पर ही निर्भर करता है। इस तरह प्रत्येक राष्ट्र के लिए शिक्षा वह पहली सीढ़ी है जिसे सफलतापूर्वक पार करके ही कोई राष्ट्र अपने अभीष्ट लक्ष्य तक पहुंचता है। राष्ट्रीय जीवन के साथ जितना घनिष्ठ संबंध प्राथमिक शिक्षा का है उतना माध्यमिक और उच्च शिक्षा का नहीं है। प्राथमिक शिक्षा का राष्ट्रीय विचारधारा और चरित्र निर्माण में भी बहुत योगदान है। यानी कि प्राथमिक शिक्षा का संबंध किसी वर्ग या व्यक्ति विशेष से नहीं है बल्कि सम्पूर्ण जनसंख्या से है। अतः इसकी उपेक्षा करना किसी भी देश के लिए पतन का कारण बन सकता है।

भारत में शिक्षा और ज्ञान के महत्व को प्राचीनकाल से ही समझा गया है और प्राचीन भारतीय शिक्षा पर धर्म और दर्शन का काफी प्रभाव रहा है, किंतु वर्तमान शिक्षा व्यवस्था जो व्यावहारिकता, वैज्ञानिक ज्ञान और विकासपरक मूल्य के काफी करीब है, उसे आधुनिक शिक्षा की देन कहा जा सकता है। भारत में आधुनिक शिक्षा का प्रसार सबसे अधिक ब्रिटिश सरकार ने किया। ब्रिटेन द्वारा भारत को अपना उपनिवेश बनाने के बाद अपनी राजनीतिक, प्रशासनिक और आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भारतीयों को आधुनिक शिक्षा देने की आवश्यकता महसूस हुई और आज उसी का सुधरा रूप सामने है।

इसी सब को देखते हुए भारत सरकार ने अनेक कार्यक्रम चलाए और अनेक प्रकार की योजनाओं को विकेंद्रित किया और उनमें से जो सबसे महत्वपूर्ण योजना इस समय चल रही है, वह है मिड डे मील योजना। यह योजना बच्चों के लिए प्रेरणादायी साबित हो रही है।

> शिक्षा के विभिन्न स्तरों में प्राथमिक शिक्षा विकास के उद्देश्यों में उस मां के समान है जो अंगुली पकड़कर बच्चे को न केवल चलना सिखाती है बल्कि प्रथम बार में उसमें आत्मविश्वास और चेतना को भी जागृत करती है। इसी संदर्भ में गांधीजी का वाक्य याद आता है कि शिक्षा से मेरा अभिप्राय मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा के गुणों का सर्वांगीण विकास करना है। इसी सबको ध्यान में रखते हुए सरकार ने संवैधानिक प्रावधान के रूप में चिन्हित करके शिक्षा को अनिवार्य बनाने का प्रयास किया है जो 86वें संविधान संशोधन 2002 द्वारा संविधान के भाग 4 में अनुच्छेद 45 के रूप में जोड़ा गया।

मिड–डे मील योजना

स्वतंत्रता के बाद से ही भारत पूर्ण साक्षरता के लिए प्रयासरत रहा है लेकिन अब तक का सबसे महत्वाकांक्षी एवं प्रभावशाली प्रयास मिड–डे मील कार्यक्रम है। प्रभावशाली ही नहीं बल्कि यह कार्यक्रम दुनिया का सबसे बड़ा मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम है। प्रारम्भिक स्कूलों के बच्चों को पोषण उपलब्ध कराने के लिए मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम एक राष्ट्रीय कार्यक्रम है जो केंद्र द्वारा समर्थित है। सरकारी, स्थानीय निकायों और सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों में पहले यह कार्यक्रम लागू किया गया था लेकिन आज कक्षा 8 तक संचालित किया जा रहा है। मिड–डे मील कार्यक्रम की शुरुआत 15 अगस्त, 1995 में की गई जो पूर्व में लागू केंद्रीय योजना प्राथमिक शिक्षा को पोषणीय सहायता (न्यूट्रीशनल सपोर्ट टु प्राइमरी एजुकेशन) का ही रूप है। विद्यालयों में मध्यान्ह भोजन का राष्ट्रीय कार्यक्रम लगभग 9.70 करोड़ ऐसे बच्चों को कवर करता है जो 9.50 लाख सरकारी (स्थानीय निकायों सहित), सरकारी सहायता प्राप्त विद्यालयों और शिक्षा गारण्टी योजना एवं वैकल्पिक तथा नवीन शिक्षा स्कीमों के अंतर्गत चलाए जा रहे केंद्रों में शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। इस कार्यक्रम का विस्तार 1 अक्तूबर 2007 से शिक्षा के उच्च प्राथमिक स्तर के बच्चों (कक्षा 6 से 8 तक) के लिए 3479 शैक्षिक रूप से पिछड़े ब्लाकों में किया गया था। इसमें कक्षा 6 से 8 तक के लगभग 1.70 करोड़ अतिरिक्त बच्चों को शामिल किए जाने की आशा है। वर्ष 2007–08 के बजट में इस योजना के लिए 7324 करोड़ रु. का प्रावधान किया गया था जबकि 2008–09 के बजट में इसे बढ़ाकर 8000 करोड़ रु. कर दिया गया है।

कार्यक्रम में प्राथमिक स्तर के बच्चों को 450 कैलोरी और 12 ग्राम प्रोटीन का मध्यान्ह भोजन मुहैया कराया जाता है। प्राथमिक स्तर से ऊपर के बच्चों के लिए 700 कैलोरी और 20 ग्राम प्रोटीन का पोषाहार निश्चित किया गया है। कार्यक्रम के अंतर्गत लौह, फौलिक एसिड और विटामिन 'ए' जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों की

पर्याप्त मात्रा की भी सिफारिश की गई है। पोषाहार मानदण्डों को पूरा करने के लिए केंद्र सरकार प्रति प्राथमिक विद्यालय बालक/विद्यालय दिवस 100 ग्राम की दर से और प्रति प्राथमिक विद्यालय से ऊपर के बालक/विद्यालय दिवस 150 ग्राम की दर से खाद्यान्न मुहैया कराती है। योजना के अंतर्गत दिये जाने वाले भोजन में प्रमुखतः तहरी, दाल, रोटी, खीर आदि पौष्टिक भोजन प्रमुख है। सरकार ने 20 जुलाई, 2008 को इसमें हलुवा एक नये व्यंजन के रूप में जोड़ दिया है। केंद्र सरकार ने वर्ष 2007–08 में प्रत्येक दो वर्ष में एक बार खाना पकाने की लागत के प्रति केंद्रीय सहायता का परिकलन करने के लिए महंगाई समायोजित करने की बात भी कही है। हालांकि यह व्यवस्था 2008–09 से लागू होगी।

प्राथमिक शिक्षा को पौष्टिक योजना से जोड़ने का दुनिया का यह सबसे बड़ा कार्यक्रम है। वर्ष 2004 में इस कार्यक्रम के कुछ उंद्देश्यों को निर्धारित किया गया :

- कक्षा 1–5 तक की शिक्षा सभी के लिए अनिवार्य कर दी गई जिसमें नामांकन, उपस्थिति, स्कूल न छोड़ना और उनमें अधिगम स्तर में सुधार लाना शामिल है।
- स्कूल स्तर में विद्यार्थियों को पौष्टिक भोजन उपलब्ध कराते हुए उनके पौषणिक स्तर में सुधार लाना है।
- इस योजना के अंतर्गत कक्षा 1–5 तक के सभी बच्चों को दोपहर के भोजन में प्रोटीनयुक्त भोजन उपलब्ध कराने की बात की गयी।

मिड–डे मील योजना के मानक

मिड–डे मील योजना की गुणवत्ता के निर्धारण के लिए सुप्रीम कोर्ट के आदेश पर प्राथमिक शिक्षा के राष्ट्रीय पोषाहार कार्यक्रम पर एक विशेषज्ञ दल का गठन किया गया है। विशेषज्ञ दल न्यूनतम गुणवत्ता मानक परिभाषित करता है, गुणवत्ता का नवीनीकरण करता है, कार्यक्रम का संचालन एवं प्रबंधन तथा कार्यक्रम की प्रभावशीलता का पता लगाता है। कुछ निर्धारित मानक निम्न हैं–

- वर्ष भर बच्चों की रुचि के अनुसार पके–पकाए पोषणयुक्त भोजन की व्यवस्था की जानी चाहिए।
- भोजन में न्यूनतम पोषण की आपूर्ति होनी चाहिए।
- प्रत्येक स्कूल में कम से कम भोजन पकाने के लिए प्रशिक्षित एक महिला स्टाफ एवं एक सहायिका की नियुक्ति करनी होगी।
- प्रत्येक स्कूल में किचेनशेड एवं भण्डारण की व्यवस्था का होना अति आवश्यक है।
- अनाज और अन्य सभी सामग्री समय से विद्यालय में उपलब्ध होनी चाहिए।
- प्रभावशाली संचालन एवं प्रबंधन तथा गुणवत्ता जांच की व्यवस्था होनी चाहिए।
- सामाजिक भेदभाव की भावना को खत्म करना होगा।
- स्कूलों में स्वास्थ्य संबंधी कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए।
- भोजन पकाने के लिए पानी तथा बच्चों के खाने के लिए बर्तन की व्यवस्था की जानी चाहिए।

योजना के इन मानकों के कार्यान्वयन का जिम्मा ग्राम प्रधान का है कि वे इससे संबंधित सभी कार्यों को ठीक और सुचारु ढंग से कार्यान्वित करें। हालांकि एक सीमा तक इस योजना के परिणाम सामने आ रहे हैं, इससे बच्चों के स्कूलों में दाखिला लेने की दर में इजाफा तो नहीं हुआ है बीच में स्कूल छोड़ने की दर में गिरावट जरूर आ आई है। जहां 2001–02 में स्कूल न जाने वाले बच्चों की संख्या 3 करोड़ से ज्यादा थी वहीं यह संख्या 2008 में एक करोड़ से भी कम हो गयी है। इन योजनाओं के पीछे सरकार का क्या उद्देश्य है और आम जनता क्या सोचती है। इस बारे में सरकार को सोचने की जरूरत है। ग्राम प्रधान, जो इस योजना का मुखिया होता है वह सोचता है कि हमारा कमीशन कितना अधिकतम हो और इससे जुड़े लोग हमेशा कमाई और भ्रष्टाचार की बात सोचते हैं और सरकार के वास्तविक मंसूबों को नाकामयाब करने का प्रयत्न करते हैं। सरकार चाहे लाखों, करोड़ों रु. बहाती रहे लेकिन जब तक इन समस्याओं को हल नहीं करेगी, यह योजना रास्ता भटकती रहेगी।

मिड–डे मील कार्यक्रम के दौरान बच्चे भोजन करते हुए

मिड–डे मील योजना में आने वाले कठिनाइयां और समाधान

- मिड–डे मील कार्यक्रम के संचालन का पूरा दायित्व ग्राम प्रधान का है और ग्राम प्रधान को अनाज सरकारी राशन की दुकान से ही लेना होता है। कनवर्जन मूल्य ग्राम प्रधान खाते में आता है इसलिए प्रतिदिन अनाज, लकड़ी, तेल, दाल, आदि स्कूल में उपलब्ध कराने की जिम्मेदारी ग्राम प्रधान की है। ग्राम प्रधान के जिम्मे अपनी ग्राम पंचायत संबंधी और भी काम है इसलिए वह इस तरफ ध्यान नहीं दे पाता है और परिणाम होता है योजना का खटाई में पड़ना। अतः सरकार को चाहिए कि इसके लिए एक अलग से प्रतिनिधि चुने जो सिर्फ यही काम करे।
- भोजन पकाने के लिए कम से कम एक प्रशिक्षित महिला एवं एक सहायिका की सिफारिश की गयी है। लेकिन वास्तविकता यह है कि अधिकतर स्कूलों में मात्र एक खाना बनाने वाली महिला के ही भरोसे यह कार्यक्रम संचालित हो रहा है। ये महिलाएं अपना सहयोगी किसी और को नहीं बल्कि उस विद्यालय के नौनिहालों को ही बनाती हैं और परिणामस्वरूप शिक्षा व्यवस्था में बाधा के रूप में यह कार्यक्रम सामने आता है।
- कनवर्जन चार्ज कभी भी ग्राम प्रधान के खाते में समयानुसार नहीं आता। यह तो उच्च अधिकारियों की लापरवाही है। अतः इस पर सरकार को ध्यान देना चाहिए कि पैसा उचित समय पर पहुंचे।
- मिड–डे मील के अनाजों की आपूर्ति का जरिया सरकारी राशन की दुकान न होकर कहीं और होना चाहिए अन्यथा इसका सारा लाभ कोटेदार और ग्राम प्रधान मिलकर ले जाएंगे और इन्हें कोई रोक नहीं पाएगा। जैसाकि आजकल सभी गांवों में हो रहा है। एक ग्राम प्रधान या कोटेदार का बड़ी–बड़ी गाड़ियों में घूमना इसी भ्रष्टाचार का सूचक है। ऐसे में सरकार को कड़े कदम उठाने होंगे। अन्यथा यह योजना केवल योजना ही बनकर रह जाएगी।
- भोजन की गुणवत्ता के निर्धारण और जांच के लिए गठित दल का तो जैसे कोई प्रभाव ही नहीं है। माह के 30 दिन में से स्कूलों में 20 दिन खिचड़ी ही बनाकर खिलाई जा रही है। अतः इस दल को अधिक उत्तरदायित्व दिया जाना चाहिए और उन पर निगरानी बनाये रखने की आवश्यकता है।
- भोजन देने के लिए बर्तनों की उचित व्यवस्था नहीं है। कई स्कूलों में मैंने लड़कों को पालिथीन पर खाते हुए देखा है। परिणामस्वरूप बच्चे तरह–तरह की बीमारियों का शिकार हो जाते हैं। देश का भविष्य बनाने की बात तो दूर इन बच्चों का अपना भविष्य ही बीमार नजर आता है। ऐसे में सरकार को उचित बर्तनों की उपलब्धता पर ध्यान देना चाहिए।

ग्रामीण या प्राथमिक शिक्षा के विकास में निःसंदेह मिड–डे मील कार्यक्रम सहायक है और यह वैश्विक स्तर पर अपनी पहचान भी बना रहा है। इसमें कोई संदेह नहीं कि सरकार द्वारा निचले स्तर पर सोचकर गरीबों और वांछितों को शिक्षा की तरफ आकर्षित करने का यह एक नायाब तरीका है। यह सोच वर्तमान में ज्यादा प्रासंगिक हो गई है क्योंकि आज देश के सभी वर्ग और तबकों को विकासधारा में सम्मिलित करने की कवायद चल रही है। इसी कारण ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना का शीर्षक **तीव्र और समावेशी विकास** रखा गया है और यह विकास तब तक अधूरा रहेगा जब तक देश में शिक्षा का स्तर नहीं बढ़ेगा और खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में।

सरकार ने मिड–डे मील कार्यक्रम पर जोर देकर यह साबित कर दिया है कि उसकी प्राथमिक शिक्षा संबंधी जागरुकता कितनी ज्यादा है। अब यह बात यह महत्वपूर्ण है कि हमारा समाज उसे किस रूप में स्वीकार करता है। विकल्प आपके सामने है चाहे आप योजना का शैक्षिक लाभ उठा लीजिए चाहे आर्थिक लाभ। इस योजना में भ्रष्टाचार व्याप्त है वो भी खासकर निचले स्तर पर। इसलिए आवश्यकता इसी बात की है कि सरकार इस संबंध में कठोर कदम उठाए और दोषियों को सजा दे। यदि ऐसा हुआ तो न केवल शिक्षा का वर्तमान सुधरेगा बल्कि भविष्य भी सुधरेगा। इस सुधार में हम आमजनों को भी आगे आना होगा और इसके खिलाफ आवाज उठानी होगी क्योंकि यह कार्यक्रम हमारे ही बच्चों के लिए हैं। समय रहते यदि इस योजना में व्याप्त भ्रष्टाचार को सरकार गंभीरता से विचार कर दूर करने में सक्षम नहीं हो पाती तो वो दिन दूर नहीं जब प्राथमिक विद्यालय केवल शोरूम बनकर रह जायेंगे। यह कार्यक्रम निःसंदेह एक व्यापक और अच्छा कार्यक्रम है, लेकिन आवश्यकता है इसके उचित कार्यान्वयन की।

(लेखक आर.आर.पी.जी. महाविद्यालय अमेठी सुल्तानपुर में प्रवक्ता हैं और प्राथमिक शिक्षा जागरुकता संबंधी अभियान से जुड़े हैं।)

ई–मेल : dwivedi386@yahoo.com

सर्वशिक्षा अभियान : योगदान और अपेक्षाएं

डॉ. उमेश चन्द्र अग्रवाल

केंद्र सरकार द्वारा प्रायोजित सर्वशिक्षा अभियान को पूरे देश में संचालित किया जा रहा है। उल्लेखनीय है कि देश के 6 से 14 आयु वर्ग के प्रत्येक बच्चे को वर्ष 2010 तक कक्षा 1 से 8 तक की अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराने जैसे महत्वाकांक्षी लक्ष्य को लेकर केन्द्र सरकार द्वारा वर्ष 2000–2001 के वार्षिक बजट में सर्वशिक्षा अभियान को क्रियान्वित करने की घोषणा की गई थी और इसे नवम्बर, 2000 से राज्य सरकारों के सहयोग से पूरे देश में लागू भी कर दिया गया।

उल्लेखनीय है कि सर्वशिक्षा अभियान की आरम्भिक रूपरेखा वर्ष 1998 में विभिन्न राज्यों के शिक्षा मंत्रियों के एक राष्ट्रीय सम्मेलन में तैयार की गई थी और इस रूपरेखा के आधार पर ही केंद्र सरकार द्वारा इसके क्रियान्वयन की रणनीति तैयार कर इसको पूरे देश में समयबद्ध तरीके से लागू करने का निर्णय लिया गया। सर्वशिक्षा अभियान की इस दस वर्षीय योजना को अमली जामा पहनाने के लिए केंद्र सरकार द्वारा आरंभिक रूप में 98,000 करोड़ रुपए की भारी–भरकम धनराशि निर्धारित भी की गई और प्रारंभ से ही कार्यक्रम के सफल संचालन के लिए इससे संबंधित राज्य सरकारों को समुचित धनराशि उपलब्ध भी कराई जाती रही है। चूंकि इस कार्यक्रम को केंद्र और राज्य सरकारों की आपसी वित्तीय सहभागिता से संचालित किए जाने की व्यवस्था की गई जिसमें प्रारंभिक वर्षों के लिए केंद्रीय सहभागिता का अनुपात अधिक रखा गया और धीरे–धीरे इसमें राज्यों की सहभागिता को बढ़ाने का प्रावधान रखा गया। 11वीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत चार मानक निर्धारित कर दिए गए हैं। इसमें दो वर्षों यथा वर्ष 2007–08 व वर्ष 2008–09 के लिए यह अनुपात 65:35, वर्ष 2009–2010 के लिए 60:40, वर्ष 2010–2011 के लिए 55:45 तथा वर्ष 2011–2012 और उसके बाद यह अनुपात 50:50 निर्धारित कर दिया गया है।

सबको मिले पढ़ने का समान अवसर

केंद्रीय वित्त मंत्रालय द्वारा जारी किए गए आंकड़ों के अनुसार सरकार द्वारा जुलाई 2004 से लगाए गए शिक्षा अधिभार से वर्ष 2004–05 में 5,010 करोड़ रुपए, वर्ष 2005–06 में 7,638 करोड़ रुपए और वर्ष 2006–07 में 9,833 करोड़ रुपए तथा वर्ष 2007–08 में 10,993 करोड़ रुपए प्राप्त हुए हैं। वर्ष 2008–09 के केंद्रीय बजट अनुमानों के अनुसार वर्ष 2008–09 में इस मद में 12,023 करोड़ रुपए प्राप्त होने की आशा व्यक्त की गई है। इस शिक्षा अधिभार के लगाए जाने से केंद्र सरकार के पास प्राथमिक शिक्षा के लिए वित्तीय संसाधनों में उल्लेखनीय वृद्धि के साथ–साथ प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण की दिशा में भी उल्लेखनीय सफलताएं अर्जित की गई हैं। इस कार्यक्रम के प्रारंभ होने के वर्ष 2001 से वर्ष 2007–08 तक इसके अंतर्गत देश के विभिन्न भागों में 1,86,985 नए स्कूल खोले गए हैं। अभी तक कुल 1,70,320 स्कूल भवनों व 7,13,179 अतिरिक्त कक्षा–कक्षों का निर्माण संभव हुआ है। इनके अतिरिक्त 1,72,381 प्राथमिक विद्यालयों में पेयजल सुविधाएं उपलब्ध कराई गई हैं और अभी तक विद्यालयों में 2,18,075 शौचालयों का निर्माण भी कराया जा चुका है। साथ ही 6.64 करोड़ बच्चों को निःशुल्क पुस्तकों की आपूर्ति कराई गई है व 9.50 लाख प्राथमिक विद्यालयों में पढ़ रहे 9.70 करोड़ बच्चों को प्रतिदिन 450 कैलोरी व 12 ग्राम प्रोटीन युक्त पोषण सहित पके हुए मध्यान्ह भोजन की व्यवस्था और 8.10 लाख शिक्षकों की नियुक्ति करके उन्हें विद्यालयों में पदस्थापित किया जा चुका है।

वर्ष 2007–08 से मध्यान्ह भोजन योजना के अंतर्गत 3,479 पिछड़े विकासखण्डों के उच्च प्राथमिक स्तर अर्थात कक्षा 6 से 8 तक के 1.7 करोड़ बच्चों को भी शामिल कर लिया गया था जिसे वर्ष 2008–09 में देश के सभी विकासखण्डों के उच्च प्राथमिक विद्यालयों के बच्चों के लिए विस्तारित कर दिया गया है। 11 से 14 आयुवर्ग के इन बच्चों के लिए प्रतिदिन 700 कैलोरी व 20 ग्राम प्रोटीन युक्त भोजन उपलब्ध कराने की व्यवस्था रखी गई है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत 9.72 लाख विद्यमान निम्न प्राथमिक और उच्च प्राथमिक विद्यालयों और इन विद्यालयों के 36.95 लाख विद्यमान शिक्षकों को भी शामिल किया गया है। इसके अतिरिक्त लगभग 35 लाख शिक्षकों को प्रति वर्ष सेवा में रहते हुए प्रशिक्षण प्रदान किया जाना सुनिश्चित किया जा रहा है। इससे उनकी शैक्षिक योग्यता में सुधार आया है। इसे एक बड़ी उपलब्धि ही कहा जाएगा कि

सर्वशिक्षा अभियान की मध्यस्थता के कारण स्कूल से बाहर रहे बच्चों की संख्या में भी महत्वपूर्ण कमी आई है। हालांकि 31 मार्च, 2007 तक के उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार 6–14 आयुवर्ग के 39.76 लाख बच्चों के नाम अभी भी स्कूलों में नामांकित नहीं हो पाए। ऐसे सभी बच्चों को भी शीघ्रातिशीघ्र विद्यालयों में नामांकित किए जाने हेतु प्रयास किए जा रहे हैं।

सर्वशिक्षा अभियान के प्रमुख लक्ष्य

देश में सभी बच्चों को प्राथमिक शिक्षा की समुचित व्यवस्था किए जाने हेतु सरकार द्वारा पूर्व में अनौपचारिक शिक्षा 1979, ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड योजना 1987, बेसिक शिक्षा परियोजना 1993, जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम 2004, कस्तूरबा गांधी विद्यालय योजना 2004, चरवाहा विद्यालय योजना 2004, राष्ट्रीय शिक्षा प्रोत्साहन योजना 2005, विशेष आवासीय बालिका विद्यालय योजना 2005, मॉडल स्कूल योजना 2008, इंसपायर छात्रवृत्ति योजना–2008, दलित/पिछड़े/अल्पसंख्यकों के बच्चों हेतु मासिक छात्रवृत्ति जैसी कई महत्वपूर्ण योजनाएं और कार्यक्रम संचालित किए गए हैं और इनका कई क्षेत्रों में अनुकूल प्रभाव भी दृष्टिगोचर हुआ है। सर्वशिक्षा अभियान (2001–2010) इन सभी कार्यक्रमों की तुलना में एक सर्वाधिक वृहद् कार्यक्रम है और इसके माध्यम से अति महत्वाकांक्षी लक्ष्य भी निर्धारित किए गए हैं। संक्षेप में सर्वशिक्षा अभियान के निम्नांकित उद्देश्य हैं–

- देश के 6 से 14 वर्ष की आयु वर्ग के सभी बच्चों को कक्षा 1 से 8 तक की निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की वर्ष 2010 तक समुचित व्यवस्था करना।
- वर्ष 2010 की समाप्ति तक इन सभी बच्चों को उपयोगी एवं समुचित गुणवत्ता और संस्कारयुक्त शिक्षा प्रदान करना।
- वर्ष 2010 तक प्रत्येक दशा में बालक और बालिकाओं में शैक्षिक असमानता और सामाजिक भेदभाव मिटाने के लिए सभी व्यवस्थाएं सुनिश्चित करना।
- सभी 6 से 11 वर्ष तक की आयु के बच्चों को प्रत्येक दशा में कक्षा 1 से 5 तक की पांच वर्ष की प्राथमिक शिक्षा प्रदान करना।
- प्रारंभिक स्तर पर सभी बच्चों को जीवनोपयोगी और समाजोपयोगी समुचित गुणस्तर की शिक्षा व्यवस्था किया जाना।
- प्राथमिक तथा उच्च प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा पूर्ण करने तक प्रत्येक दशा में सभी ऐसे बच्चों को विद्यालय में अध्ययनरत् रखना।
- प्राथमिक शिक्षा के मौजूदा ढांचे का समुचित प्रकार से उपयोग करते हुए इस अभियान के माध्यम से शिक्षा संबंधी सभी प्रयासों को एकसूत्र में बांधते हुए इसे अधिक क्रियाशील बनाना।

शिक्षा का संवैधानिक परिप्रेक्ष्य

हमारे मूल संविधान में शिक्षा 'राज्य सूची' का विषय थी और तद्नुसार शिक्षा की व्यवस्था करना सभी संबंधित राज्य सरकारों का उत्तरदायित्व रहा हालांकि केंद्रशासित प्रदेशों में राष्ट्रीय महत्व की शिक्षण संस्थाओं तथा तकनीकी एवं उच्च शिक्षा की व्यवस्था करना केंद्रीय सरकार का उत्तरदायित्व रखा गया था। परंतु देश में मानव संसाधन के समुचित विकास एवं समायोजन में शिक्षा के महत्व को देखते हुए वर्ष 1976 में 42वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा शिक्षा को 'समवर्ती सूची' में सम्मिलित किया गया जिससे केंद्र तथा राज्य दोनों का शिक्षा की व्यवस्था करने का संयुक्त उत्तरदायित्व हो गया है। यह भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि हमारे मूल संविधान में सामान्य शिक्षा के बारे में नागरिकों के मूल अधिकार से संबंधित भी कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं था। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस संबंध में अपने एक महत्वपूर्ण निर्णय द्वारा स्पष्ट किया गया और कहा गया कि शिक्षा पाने का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन प्रत्येक नागरिक का एक मूल अधिकार है और सभी को शिक्षा उपलब्ध कराना राज्य का उत्तरदायित्व है। हालांकि इस पर एक परिसीमा भी लगा दी गई कि यह अधिकार 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए ही सीमित रहेगा और उच्च शिक्षा के मामले में यह अधिकार राज्य की आर्थिक क्षमता पर निर्भर करेगा।

इस प्रकार 86वें संविधान संशोधन अधिनियम 2002 के द्वारा संविधान में संशोधन कर जोड़े गए अनुच्छेद–21 (क) के माध्यम से शिक्षा को संविधान के भाग–3 अध्याय 11 के अंतर्गत मूल अधिकार का दर्जा प्रदान कर दिया गया है जिससे 6–14 वर्ष की आयु के सभी बालकों को शिक्षा का मूल अधिकार प्रदान करना स्पष्ट एवं सुनिश्चित किया

सरकार मौलाना आजाद के जन्मदिन को राष्ट्रीय शिक्षा दिवस के रूप में मनाएगी

समाज के विभिन्न तबकों से लगातार यह मांग की जा रही थी कि महान स्वतंत्रता सेनानी, प्रतिष्ठित शिक्षाविद् और देश के पहले केंद्रीय शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम आजाद के जन्मदिन 11 नवम्बर को उचित ढंग से राष्ट्रीय शिक्षा दिवस के रूप में मनाया जाए। कई राज्य सरकारों ने भी ऐसी मांग का समर्थन किया है। तद्नुसार केन्द्र सरकार ने हर साल 11 नवम्बर को राष्ट्रीय शिक्षा दिवस के रूप में मनाने का फैसला किया है लेकिन इस दिन अवकाश की घोषणा नहीं होगी।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने भारत में शिक्षा के क्षेत्र में उनके महान योगदान को याद करते हुए भारत के इस महान सपूत का जन्मदिन मनाने का फैसला किया। शिक्षा संस्थान विचार, निबंध लेखन, भाषण प्रतियोगिताएं, कार्यशालाएं और साक्षरता के महत्व पर बैनर्स, कार्ड एवं नारे सहित रैलियां आयोजित करने के लिए हर स्तर पर शामिल होंगे। (पसूका)

गया है। संविधान के अनुच्छेद 45 में एक अनुच्छेद 45–ए जोड़कर देश के 6–14 वर्ष के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करने के साथ–साथ राज्य को 6 वर्ष तक की आयु के सभी बालकों के पूर्व बाल्यकाल की देखरेख और शिक्षा के लिए अवसर प्रदान करने के लिए भी उत्तरदायी बना दिया गया है। 6–14 वर्ष के बालकों के माता–पिता और प्रतिपाल्य के संरक्षकों का यह कर्तव्य होगा कि वे उन्हें शिक्षा का अवसर प्रदान करें। अब इस व्यवस्था को व्यावहारिक अर्थों में परिणित किए जाने हेतु समुचित प्रावधानों का निर्धारण और उनका क्रियाशील क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाना अति आवश्यक है तभी निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति संभव हो सकेगी।

सर्वशिक्षा अभियान की प्रगति

- सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत वर्ष 2007–08 तक कुल वास्तविक खर्च 45,236 करोड़ 74 लाख रुपए हुआ है जिसमें से अभी तक सर्वाधिक व्यय वर्ष 2007–08 में 12,521 करोड़ है।
- सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत प्रत्येक बस्ती की एक किलोमीटर की परिधि में एक प्राथमिक स्कूल की स्थापना का लक्ष्य निर्धारित है जिसे काफी हद तक पूरा किया जा चुका है।
- इसमें सभी प्राथमिक विद्यालयों में प्रत्येक 40 विद्यार्थियों के लिए एक शिक्षक की नियुक्ति सुनिश्चित किए जाने हेतु प्रावधान रखा गया है।
- निम्न प्राथमिक स्तर के अर्थात् 6 से 11 आयुवर्ग के बच्चों को दोपहर के भोजन में 450 कैलोरी और 12 ग्राम प्रोटीन दिया जाता है। इसके अलावा इसमें लोहा, फोलिक एसिड और विटामिन ए जैसे सूक्ष्म पौष्टिक तत्व भी पर्याप्त मात्रा में दिए जाने की व्यवस्था रखी गई है।
- उच्च प्राथमिक स्तर के 11–14 आयुवर्ग के बच्चों को दोपहर के भोजन में 700 कैलोरी और 20 ग्राम प्रोटीनयुक्त तत्वों सहित अन्य सूक्ष्म पौष्टिक पदार्थों को भी शामिल किया गया है।
- इस अभियान के अंतर्गत 9.72 लाख विद्यमान निम्न व उच्च प्राथमिक विद्यालयों व इनमें कार्यरत 36.95 लाख शिक्षकों को भी सम्मिलित किया गया है।
- सर्वशिक्षा अभियान के संचालन के फलस्वरूप निम्न प्राथमिक स्कूलों में नामाकंन की दर में 14.8 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।
- सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत वर्ष 2000 के बाद प्राथमिक स्तर पर नामांकन का प्रतिशत बढ़कर 108.56 तक पहुंच गया है।
- वर्ष 2001 में 6–11 वर्ष के 4 करोड़ 22 लाख बच्चे स्कूल नहीं जाते थे, 2007 में ऐसे बच्चों की संख्या घटकर 39 लाख 76 हजार रह गई है।
- बालिकाओं के नामांकन की दर 43.7 प्रतिशत (2001) से बढ़कर 46.7 प्रतिशत (2005) हुई और बालक–बालिकाओं के नामांकन में अंतर 19 से घटकर 6 प्रतिशत रह गया है।
- अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के बालकों के नामांकन अनुपात में क्रमशः 25.6 और 22.3 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।
- सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत 31 मार्च, 2007 तक 1,10,217 स्कूल खोले जा चुके हैं। इस अवधि में 1,70,320 भवनों का निर्माण पूरा किया गया है।
- इस अभियान के अंतर्गत अभी तक 1,72,381 प्राथमिक विद्यालयों में पेयजल सुविधाएं उपलब्ध कराई गई हैं तथा वहां 1,93,608 शौचालयों का निर्माण भी कराया गया है।
- वर्ष 2007–08 में 6 करोड़ 40 लाख मुफ्त पुस्तकें वितरित की गई हैं।
- इस अभियान के अंतर्गत प्राथमिक विद्यालयों में 8 लाख 10 हजार शिक्षक नियुक्त कर लिए गए हैं।
- 11वीं पंचवर्षीय योजना (2007–2012) में सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत कुल 1,81,544 करोड़ रुपए व्यय किए जाने का अनुमान है।

सर्वशिक्षा अभियान पर केंद्र सरकार द्वारा वर्षानुवर्ष खर्च किए गए बजट की राशि (तालिका) को देखने से विदित होता है कि भारत सरकार द्वारा इस अभियान के लिए वर्ष 2001–02 में केवल 498.37 करोड़ रुपए की धनराशि स्वीकृत की गई थी। वर्ष 2008–09 में इस राशि को बढ़ाकर 12 हज़ार 527 करोड़ रुपए कर दिया गया है। इस प्रकार की भारी–भरकम राशियां खर्च किए जाने के बाद भी शत–प्रतिशत बच्चे स्कूल में प्रवेश नहीं ले पा रहे हैं और जो बच्चे प्रवेश ले भी लेते हैं उन सभी का विद्यालयों में ठहराव सुनिश्चित नहीं हो पा रहा है। सर्वशिक्षा अभियान पर सालदर–साल बढ़ रहे बेतहाशा खर्च और तथाकथित प्रयासों के बाद भी निर्धारित लक्ष्यों का पूरा न हो पाना निश्चित रूप से चिंताजनक विषय है। इस बारे में भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक की पिछले दिनों जारी हुई रिपोर्ट में भी टिप्पणी की गई है कि सर्वशिक्षा अभियान का बेहतर तरीके से संचालन नहीं हो पा रहा है तथा इस पर खर्च किए जा रहे धन का भी पूर्णतः सही उपयोग नहीं हो पाया है। इस रिपोर्ट में उल्लेख किया गया है कि राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली तक में इस अभियान का कोई लक्ष्य पूर्ण नहीं हो सका है। रिपोर्ट में दिए आंकड़े स्पष्ट करते हैं कि अभी भी भारी संख्या में बच्चे स्कूल नहीं जा रहे हैं, साथ ही स्कूल न जाने वाले बच्चों में अधिकांश अनुसूचित जाति, जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्गों

(क) सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत राज्यों को जारी केंद्रीय सहायता (करोड़ रु. में)

वर्ष	आरंभिक स्वीकृत राशि	व्यय हुई धनराशि
2001–02	498.37	172.04
2002–03	1558.28	1305.66
2003–04	2698.38	3648.44
2004–05	5139.70	6598.40
2005–06	7334.50	9985.20
2006–07	7800.00	11,000.00
2007–08	10,671.00	12,527.00
2008–09	13,100.00	———

(ख) सर्वशिक्षा अभियान हेतु 11वीं पंचवर्षीय योजना में आवश्यकता (केंद्र–राज्य)

योजना अवधि	6–14 आयुवर्ग के बच्चों की संख्या (करोड़ में)	प्राथमिक विद्यालयों में नामांकन (करोड़ में)	अतिरिक्त प्राथमिक विद्यालयों की आवश्यकता (लाख में)	वार्षिक कुल व्यय (करोड़ रु. में)
2007–08	19.22	18.36	1.53	38,094
2008–09	19.05	18.39	1.50	38,332
2009–10	18.89	18.33	1.50	33,430
2010–11	18.72	18.15	0.0	33,661
2011–12	18.53	17.97	0.0	38,027

के हैं। विद्यालयों में दाखिल होने वाले बच्चों की विद्यालयों में उपस्थिति में भारी कमी को भी इसमें रेखांकित किया गया है। अतः इस अभियान के अंतर्गत निरन्तर बढ़ाए जा रहे निवेशों के अनुपात में इसके लिए निर्धारित लक्ष्यों के सापेक्ष प्राप्त हो रहे परिणामों पर भी तीक्ष्ण नजर रखने की आवश्यकता है। इस महत्वपूर्ण अभियान की सफलता सुनिश्चित करने हेतु अतिरिक्त प्रयास और कुछ विशेष व्यवस्थाएं निर्धारित किया जाना भी आवश्यक प्रतीत होता है। इस हेतु निम्न सुझावों पर विचार किया जाना समीचीन लगता है–

- सरकार द्वारा प्राथमिक शिक्षा को कानूनी रूप से अनिवार्य घोषित करके इसका कड़ाई से अनुपालन सुनिश्चित कराया जाना चाहिए। 86वें संविधान संशोधन से इसे बच्चों के मौलिक अधिकारों में अवश्य जोड़ दिया गया है लेकिन इसके समुचित रूप से क्रियान्वयन की औपचारिकताएं अभी तक भी पूरी नहीं हो सकी हैं, और न ही दोषी अभिभावकों हेतु दण्डात्मक व्यवस्थाएं निर्धारित की जा सकी हैं। अतः आवश्यक है कि निर्धारित आयुवर्ग के बच्चों को स्कूल भेजने हेतु इसमें अभिभावकों की जिम्मेदारी निर्धारित की जाए तथा अनुपालन न करने पर दण्डात्मक कार्यवाही किए जाने का प्रावधान किया जाए। अन्यथा किन्हीं न किन्हीं निहित कारणों से सभी बच्चे स्कूल नहीं जा पाएंगे और सर्वशिक्षा अभियान की सफलता अवश्य प्रभावित होगी।
- हर हालत में देश के प्रत्येक गांव और बस्ती में प्राथमिक विद्यालय की उपलब्धता और उसमें पर्याप्त आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराना सुनिश्चित किया जाना चाहिए। सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत हर गांव में विद्यालय खोलने हेतु व्यवस्था की जा रही है लेकिन अभी तक भी देश के 5 लाख 93 हजार गांवों में से करीब 50 हजार गांवों में प्राथमिक विद्यालय भी स्थापित नहीं हो पाए हैं। दूरदराज के क्षेत्रों में विशेष रूप से जहां स्कूल स्थापित भी हो पाए हैं, वहां विद्यालय भवन, शिक्षक तथा शिक्षण सामग्री आदि का नितान्त अभाव है। अतः अतिशीघ्र सभी गांवों में पर्याप्त संसाधनों युक्त विद्यालय खोलने हेतु इस तरह के कार्यक्रमों में तेजी लाना जरूरी है।
- सभी प्राथमिक विद्यालयों में पर्याप्त संख्या में शिक्षकों की नियुक्ति आपूर्ति सुनिश्चित की जाए। हमेशा से इस बात को

सर्वशिक्षा अभियान की सफलता

प्रारंभिक शिक्षा के सर्वसुलभीकरण के लक्ष्य को मिशन के रूप में समयबद्ध तरीके से प्राप्त करने के लिए देश के सभी जिलों में सर्व– शिक्षा अभियान कार्यक्रम क्रियान्वित किया जा रहा है। सर्व शिक्षा अभियान के आरंभ होने के परिणामस्वरूप देश में 6–14 आयु वर्ग के सभी बच्चों (जो वर्ष 2001–02 में 320 लाख थे) को प्रारंभिक शिक्षा की परिधि में लाया गया है, इसमें 75.97 लाख (31 मार्च 07 के अनुसार), ऐसे बच्चे, जो दुष्कर पहुंच की श्रेणी में आते हैं, शामिल नहीं हैं।

सर्वशिक्षा अभियान के कार्यान्वयन हेतु वर्ष 2007–08 के बजट अनुमान में 10,671 करोड़ रुपए की केंद्रीय बजट सहायता प्रदान की गई। संशोधित अनुमान 2007–08 में इसमें वृद्धि करके 13,171 करोड़ रुपए कर दिया गया। 10 मार्च, 2008 तक 11,336.38 करोड़ रुपए की राशि राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों को जारी की जा चुकी है। सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत मुख्य लक्ष्यों की 31 दिसंबर, 2007 तक संचयी उपलब्धि अनुबंध में दी गई है। वर्ष 2007–08 तक सर्व शिक्षा अभियान कार्यक्रम के अंतर्गत 11.32 लाख शिक्षक संस्वीकृत किए गए हैं जिनमें से 31 दिसंबर, 2007 तक 8.80 लाख शिक्षकों की भर्ती की गई है। इसमें छात्र–शिक्षक अनुपात के राष्ट्रीय औसत में प्राथमिक स्तर पर वर्ष 2005–06 के 38:1 के मुकाबले वर्ष 2007–07 में 36:1 का और उच्च प्राथमिक स्तर पर वर्ष 2005–06 के 34:1 का सुधार हुआ है। (पसूका)

सरकार स्वीकार करती रही है कि शिक्षकों की कमी है और उसे शीघ्र दूर करने की घोषणाएं भी की जाती रही हैं। इस अभियान के अंतर्गत पिछले 5 वर्षों में कई लाख शिक्षकों की भर्तियां भी की गई हैं लेकिन यथार्थ यह है कि विद्यालयों में शिक्षकों की कमी अभी भी बरकरार है। अतः इस ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

- सामान्यतया प्राथमिक स्तर के शिक्षकों के पास शिक्षण कार्य के अलावा ग्राम पंचायत स्तर से लेकर संसद तक के चुनाव संबंधी कार्य, जनगणना, बाल श्रमिक गणना, गरीबों की गणना जैसे अनेक कार्यों को संपादित किए जाने का दायित्व दिया जाता है जिससे वे शिक्षण सत्र के अधिकांश दिनों में शिक्षण कार्य संपादित नहीं कर पाते। इसका शिक्षण कार्य पर कुप्रभाव पड़ता है। अतः इस प्रकार के दायित्वों से उन्हें मुक्त किया जाना नितांत रूप से आवश्यक है।
- सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत हालांकि वित्तीय संसाधनों की पर्याप्तता और समय पर उनका प्रवाह काफी हद तक सुनिश्चित किए जाने का प्रयास किया गया है लेकिन फिर भी कभी प्रशासनिक लापरवाही, कभी विभागीय अड़चनों और कभी बैंकों आदि की औपचारिकताएं पूरी न हो पाने के कारण यथा समय और यथा मात्रा में संसाधनों की उपलब्धता में विलम्ब होता रहता है। अतः इस प्रमुख अभियान की सफलता हेतु प्रत्येक दशा में आवश्यक वित्तीय संसाधनों का नियंत्रित और समय पर प्रवाह सुनिश्चित किया जाना चाहिए।
- सर्वशिक्षा अभियान की सफलता सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक है कि जिस उत्साह के साथ इस अभियान को जारी रखने की सरकार द्वारा घोषणाएं की जाती रही हैं, इसे पूरा होने तक उसी रूप में बनाए रखे। इसके लिए अभियान के प्रति राजनैतिक प्रतिबद्धता अपरिहार्य है। तभी इस अभियान से वांछित लक्ष्यों को पूरा किया जाना संभव हो सकेगा। दूसरे स्तर पर अभियान की सफलता सुनिश्चित करने हेतु समुचित प्रशासनिक प्रतिबद्धता भी आवश्यक है। इसके अभाव में ही अभियान से वांछित परिणाम नहीं मिल पा रहे हैं। प्रशासनिक प्रतिबद्धता बनाए रखने के लिए प्रशासनिक अधिकारियों का इस अभियान के प्रति भावनात्मक लगाव पैदा करने के लिए भी विशेष प्रयत्न किए जाने चाहिए।
- प्राथमिक शिक्षा के लिए आवश्यक वित्तीय संसाधनों की कमी को दृष्टिगत रखते हुए यह भी आवश्यक प्रतीत होता है कि प्राथमिक शिक्षा को पूरी तरह निःशुल्क रखा जाना वर्तमान परिप्रेक्ष्य में बिल्कुल जरूरी नहीं है। ऐसे लोग जो इसका खर्च वहन करने में सक्षम हैं, उनके लिए सशुल्क प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराई जाए तथा गरीब, वंचित और साधनविहीन लोगों के लिए इसे निःशुल्क रखने के साथ–साथ इन्हें अन्य आवश्यक सुविधाओं की भी व्यवस्था कर देनी चाहिए ताकि बच्चों के साथ–साथ उनके अभिभावकों का पर्याप्त लगाव भी विकसित हो सकेगा और तभी इस अभियान के भी और अच्छी गति पकड़ने की संभावनाएं बनेंगी।
- अभियान की सफलता हेतु हर स्तर से इसका और भी अधिक प्रचार–प्रसार किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। साथ ही इस अभियान के नियोजन और कार्यान्वयन के प्रत्येक स्तर पर और प्रत्येक चरण में चुनी हुई त्रि–स्तरीय पंचायतों, स्वयंसेवी संस्थाओं, नागरिक संगठनों आदि की अधिक से अधिक सहभागिता प्राप्त की जानी चाहिए। अभी तक इन संस्थाओं से जो भी सहयोग लिया जाता रहा है उसके सामान्यतया अच्छे परिणाम ही प्राप्त हुए हैं। अतः इनसे और भी अधिक सहयोग प्राप्त करने हेतु व्यवस्थाएं निर्धारित की जानी चाहिए। इससे इस अभियान से और भी अच्छे परिणाम प्राप्त होने की संभावनाएं बलवती होंगी।

आशा है कि उपरोक्त सुझावों पर अमल किए जाने से निश्चित रूप से इस अभियान में बेहतर परिणाम हेतु मार्ग प्रशस्त हो सकेगा। इस संबंध में यह भी विचारणीय है कि इन सभी सुझावों पर एक साथ और एक समय में अमल किया जाना व्यावहारिक दृष्टि से संभव नहीं होगा लेकिन एक सुनियोजित, सुनिश्चित योजना के अंतर्गत एक व्यावहारिक कार्ययोजना तैयार कर उसे पूरी निष्ठा, तत्परता और प्रतिबद्धता के साथ लागू करने पर विचार किया जाना चाहिए।

(लेखक राज्य नियो. संस्थान उत्तर प्रदेश में संयुक्त निदेशक हैं।
ई –मेल : umeshagarwal215@yahoo.in

लेखकों से

कुरुक्षेत्र के लिए मौलिक, अप्रकाशित लेखों का स्वागत है। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो (Krutidev 010 CD में) और उसके साथ ई–मेल तथा मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। **कुरुक्षेत्र** में साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित नहीं की जाती हैं। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। लेख वरिष्ठ संपादक, **कुरुक्षेत्र** कमरा नं. 655, 'ए' विंग, गेट नं. 5, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110011 के पते पर भेजें।

ग्रामोत्थान के लिए प्राथमिक शिक्षा का महत्व

प्रो. विमला उपाध्याय

भारत गांवों का देश है। यदि 7.2 लाख गांवों में बस रही देश की पचहत्तर प्रतिशत जनता तक शिक्षा का प्रकाश न पहुंच पाया, उन्हें उनके अधिकारों व कर्त्तव्यों से अवगत न कराया गया, विकास की मुख्यधारा से न जोड़ा गया, तो न गांधी के गांव खुशहाल रहेंगे, न विनोबा भावे का सर्वोदय चरितार्थ हो पाएगा, न पं. नेहरू की समाजवादी समाज की कल्पना साकार हो पाएगी। कहा गया है 'एकै साधे सब सधे'–एक को साधने से सब सिद्ध हो जाता है। मूल को सींचने से वृक्ष फल–फूल से भर जाता है। ग्रामीण अर्थविकास के लक्ष्य को शिक्षा से कतई अलग नहीं किया जा सकता है। शिक्षा का आर्थिक विकास से वैसा ही नाता है, जैसे दूध का उजलेपन से और मछली का जल से। स्व. इंदिरा गांधी ने भी कहा था "शिक्षा एवं विकास एक–दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़े हैं।" नोबल पुरस्कार विजेता प्रो. गुर्नार मिर्डल ने अपनी चर्चित कृति में बताया है "बहुत बड़ी जनसंख्या को निरक्षर छोड़कर राष्ट्रीय विकास कार्यक्रम शुरू करने की बात मुझे निरर्थक मालूम होती है।" सच पूछिए, तो कुशल मानवीय साधनों का विकास शिक्षा द्वारा ही किया जा सकता है।

इसलिए यह सहज स्वीकार्य है कि गांवों के पिछड़ेपन, गरीबी, अल्प–उत्पादकता, रूढ़ियों आदि के समूल नाश एवं जनजागृति का एक ही उपाय है शिक्षा, जिसका श्रीगणेश प्राथमिक शिक्षा से ही संभव है।

शिक्षा की अवधारणा

'एजुकेशन' शब्द लैटिन भाषा के शब्द 'एजुकेचर' से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ है पालन–पोषण करना, मार्ग दिखाना। इसका तात्पर्य हुआ कि व्यक्ति के अंदर जो गुण हैं, उन्हें सामने लाना और प्रच्छन्न (छिपा हुआ, अंतर्निहित, अप्रकट) को स्पष्ट करना। यह एक जीवनपर्यंत (आजीवन, जबतक जीवन रहेगा) प्रक्रिया है, जो चरित्र और अंतर्जात क्षमताओं का विकास करके व्यक्ति की प्रकृति को पूर्णता की ओर ले जाती है। शिक्षा से व्यक्ति के चरित्र और व्यक्तित्व का विकास होता है, तो उससे भौतिक कल्याण की आशा भी की जाती है। देश में आर्थिक विकास के लिए उदारवादी नीति अपनाई जाए, विज्ञान एवं आधुनिकीकरण का उपयोग किया जाए या छोटे–छोटे गृह–कुटीर उद्योगों की दिशा में पहल की जाए अथवा कृषि प्रौद्योगिकी के विकास की कल्पना को सार्थक किया जाए जरूरत शिक्षा की ही होगी। आंतरिक सुख, आनंद प्राप्ति को शिक्षा का अलंकारिक पक्ष (कलावादी पक्ष भी कह सकते हैं) और भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए साधन उपलब्ध करना उसका उपयोगितावादी (भौतिक भी कह सकते हैं) पक्ष है। भूखे पेट भजन नहीं हो सकता और पेट भरने भर से विकास नहीं हो सकता। क्षमता, संभावनाओं के विकास हेतु शिक्षा ही महान विकल्प है, जिसकी शुरुआत प्राथमिक शिक्षा से ही होगी।

यूनेस्को का सर्वेक्षण और शिक्षा की प्राथमिकता

यूनेस्को के एक सर्वेक्षण–प्रतिवेदन से पता चला है कि 15 वर्षों से भारत का एक–तिहाई वर्ग आज भी रोजी–रोटी के लिए संघर्ष कर रहा है। तब क्या यह मुमकिन है कि दो जून रोटी मुहैया कराने की कोशिश छोड़कर शिक्षा पर व्यय किया जा सके? निरक्षरता और गरीबी में चोली–दामन का संबंध है। जो निरक्षर रहेगा, वह गरीब होगा और गरीब निरक्षर भी। परंतु प्रो. मिर्डल ने जिस ओर संकेत किया है, उसका तात्पर्य है कि निरक्षरता रूपी राक्षसी विकास पर उपलब्ध सारे साधनों व धन को लील जाएगा। कहावत है कि भला करना चाहते हैं, तो एक पैसा देने के बजाए उसे एक गुण सिखा दीजिए। शिक्षा के माध्यम से ही भारत के गांवों को सामाजिक परिवर्तन और ग्राम विकास की विभिन्न योजनाओं से जोड़ सकते हैं।

शिक्षा जीवन में आदर्श का मूल्यबोध कराती है

शिक्षा और मूल्य का गहरा संबंध है। मूल्यहीन शिक्षा वास्तव

में शिक्षा है ही नहीं। वह तोतारटंत है। प्राथमिक शिक्षा से प्रारंभ कर जैसे–जैसे इस पूर्ण शिक्षा की ओर बढ़ते जाते हैं, भौतिकता और मानसिकता में संतुलन होता जाता है। गांव के एक गरीब के लिए संभव है शिक्षा के अभाव में सारी नैतिक मर्यादाओं का उल्लंघन कर रोटी को प्राथमिकता देना। परंतु पूर्ण शिक्षा तक आते–आते वह भौतिक उपलब्धि और मानसिक सुख–संतोष में संतुलन करने लगेगा। तात्पर्य यह है कि एक ग्रामीण नवयुवक न आत्मिक आनंद के लिए भौतिकता की उपेक्षा करेगा, न भौतिकता के लिए आत्मिक आनंद की बलि देगा। आज हमारे जीवन में जहर इसलिए घुल गया है कि आत्मा की पुकार अनसुनी हो जाती है। भौतिकता की पुकार पर हम जीवन न्यौछावर करने के लिए तत्पर रहते हैं। शिक्षा मूल्यबोध कराती है कि जीवन में क्या आदर्श है, क्या करणीय है, क्या नैतिक, धार्मिक है। इसी मूल्यबोध के अभाव में गांव वीरान हो गए हैं। शहर की ओर उनका पलायन हो रहा है। इसलिए यह बड़ा जरूरी है कि प्राथमिक शिक्षा सबको उपलब्ध हो, पर उसका पाठयक्रम मूल्यबोध का दर्शन हो। उससे बच्चों में ऊंचे संस्कार विकसित हों। उनकी सुप्त चेतना जगे। वे अपने विकास के साथ अपने पड़ोसी, समाज और देश के विकास के लिए अपने को तैयार करें।

भारत में शिक्षा की स्थिति

भारत में 10,000 से अधिक पूर्व प्राथमिक केंद्र, 5 लाख प्राथमिक विद्यालय, 170 विश्वविद्यालय और 7 हजार से अधिक शिक्षा महाविद्यालय हैं। 1 से 5 तक की कक्षाओं में 59 प्रतिशत से अधिक शिक्षात्याग का आंकड़ा है। यह प्रतिशत शहर–गांव का मिलाकर है। दोपहर के भोजन की व्यवस्था के बावजूद गांवों में शिक्षात्याग का प्रतिशत 70 से 80 तक है, कारण है ग्रामीण गरीबी। बच्चों को मवेशी चराने, अपने भाई–बहनों को खिलाने, घर के कामकाज में लगाने का परिणाम है यह शिक्षात्याग। थोड़ी–सी आमदनी के लिए बच्चों को जन्मभर के लिए शिक्षा के प्रकाश से वंचित रखना। भारत में कुल साक्षरता 68.11 प्रतिशत है, जिसमें पुरुष साक्षरता का प्रतिशत महिलाओं से डेढ़ गुना अधिक है। कारण, वही पारंपरिक ढांचा, महिलाओं का नाना स्तरों पर शोषण, उनका घर के कामकाज में लगे रहना और प्रति–परमेश्वर की रूढ़ कल्पना।

महिला शिक्षा की उपेक्षा के कारण

1975 में संयुक्त राष्ट्र संघ की ओर से "अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष, 1975" के उपलक्ष्य में मैक्सिको में विश्व सम्मेलन हुआ था। 1979 में गुटनिरपेक्ष एवं अन्य विकसित देशों का एक सम्मेलन बगदाद में भी हुआ था। विषय था 'विकास में महिलाओं की भूमिका'। इसी विषय पर हवाना में भी 1981 में सम्मेलन हुआ। उससे निम्नांकित तथ्य उभरकर आए:

- अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष विकास में समुचित भागीदारी और मानवीय जीवन जीने के लिए महिलाओं को कठोर परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है।
- आत्मविश्वास की सारी संभावनाएं नारी होने, प्रजनन तथा परिवार पालने में समाप्त हो जाती हैं। उनका दोयम दर्जे (सेकेंड सेक्स) का होना ही बाधा का कारण है।
- घर, परिवार, समाज, देश सबके प्रति उनका सकारात्मक रुख हो, सबके विकास का संकल्प हो, तो शिक्षा की महती आवश्यकता है।

इन सम्मेलनों में निम्न अनुशंसाएं की गईः

ग्रामीण क्षेत्रों तथा सुविधाहीन क्षेत्रों की महिलाओं को निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा दी जाए, जिससे आर्थिक–सामाजिक विकास को गति मिले तथा उनकी वैयक्तिक मुक्ति का द्वार उन्मुक्त हो, उनको सर्वांगीण विकास के अवसर मिलें तथा सामाजिक परिवर्तन में उनकी भागीदारी हो।

- नगर की धनाढ्य जागरुक महिलाओं को विकास की तेज रफ्तार के साथ कदम–से–कदम मिलाकर चलने के लिए नाना प्रकार के शिक्षण–प्रशिक्षण–पुनश्चर्या की जरूरत है। मनोवैज्ञानिक चिकित्सा की प्रारंभिक जानकारी भी हो जिससे विधि–निषेध, करणीय–अकरणीय का अंतर वे अपने विवेक से कर पाएं। हर परिस्थिति में वे पूर्णतः जागृत और विवेकशील हों।

विमला मेहता (1979) का मानना हैः "महिला की शिक्षा का अर्थ है राष्ट्र की शिक्षा। एक महिला शिक्षित हुई तो कई शिक्षित होंगे। एक दीपक कई दीपक जलाएगा। महिला शिक्षा की बुनियादी खूबियां हैं बौद्धिक प्रगतिशीलता, जिसकी परिणति है राष्ट्र के प्रति गतिशीलता।" उनके अध्ययन का निष्कर्ष है प्रत्येक शिक्षित महिला को एक प्रकार का सामाजिक मूल्य विकसित करना है, एक प्रकार की सामाजिक मानसिकता उन मूल्यों के प्रति भी हो। शिक्षा तज्जन्य मूल्यबोध और उसके प्रति सतत जागरुकता लाती है। यही नई पीढ़ी में नए संस्कार और जीवन समर से जूझने की शक्ति भरती है।

प्राथमिक शिक्षा के लिए वित्तीय प्रावधान

अर्थव्यवस्था की पुनर्रचना के साथ शिक्षा क्षेत्र भी प्रभावित रहा है। उत्तरदायित्व, निजी क्षेत्रों से संसाधन जुटाने तथा निर्धारित लक्ष्य पाने के लिए पंचवर्षीय योजना के काल से ही प्रारंभिक शिक्षा के

लिए प्राथमिकता के आधार पर आवंटन तथा 10+2 प्रणाली वाले विद्यालयों में व्यावसायिक शिक्षा के द्वारा माध्यमिक शिक्षा के सुदृढ़ीकरण को नीतिगत संकल्प का दर्जा हासिल रहा है।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित वार्षिक रिपोर्ट में कुछ जरूरी जानकारियां दी गई हैं। वहां मूल्यशिक्षा पर अधिक बल दिया गया है। शिक्षा नीति और वर्तमान योजना विद्यालय शिक्षा के द्वारा इन मूल्यों का विकास करना चाहती है। पुरातन पंथ, धार्मिक कट्टरता, अंधविश्वास, भाग्यवाद, अन्याय, शोषण और सामाजिक अलगाव को नष्ट करने तथा ईमानदारी, सच्चाई, साहस, दृढ़ विश्वास, स्पष्टवादिता, निर्भयता, सहिष्णुता, सहयोग भावना, दूसरों की सहायता, समुदाय के प्रति सरोकार, शारीरिक श्रम का सम्मान, वैज्ञानिक और विषयमुखी दृष्टि, धर्मनिरपेक्षता, लोकतंत्र और समतावाद जैसे मूल्यों को प्रोत्साहित करने में शिक्षा की भूमिका स्वीकार की गई है। "संस्कृति और मूल्यों को बल पहुंचाने के लिए एक सहायता योजना" के लिए आठवीं योजना में 4.75 करोड़ रुपए का आवंटन किया गया था। उपर्युक्त सात बुनियादी जरूरतों की पूर्ति के लिए 24 अरब 66 करोड़ रुपए का प्रावधान है। निर्धन बच्चों के आवासीय विद्यालयों की स्थापना के लिए 15 करोड़ रुपए का प्रावधान है।

इस प्रकार यह सुनिश्चित और सुविदित है कि शिक्षा की व्यक्तित्व, देश, गांव, समाज के विकास के लिए महती आवश्यकता है। देश की आत्मा गांवों में रहती है। वहां के लिए प्राथमिक शिक्षा की अनिवार्यता, तथा उपलब्धता नितांत आवश्यक है। क्योंकि वहां अधिक अंधेरा है, अधिक पिछड़ापन है। प्राथमिक शिक्षा के प्रचार के साथ पाठ्यग्रंथों को मूल्यांकन सापेक्ष बनाना भी जरूरी है जिससे बच्चे सच्चे नागरिक बन सकें और राष्ट्र की गौरव–वृद्धि हो।

ग्राम स्वराज्य संबंधी बापू की कल्पना और प्राथमिक शिक्षा

बापू ने कहा था– "ग्राम स्वराज की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी आम जरूरतों के लिए अपने पड़ोसियों पर भी निर्भर नहीं करेगा और फिर बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए, जिसमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा, वहां परस्पर सहयोग से काम होगा। इस तरह हर एक गांव का पहला काम यह होगा कि वह जरूरतों के तमाम अनाज और कपड़ों के लिए पूरा कपास पैदा कर ले। उसके बाद भी जमीन बचे, तो उसमें वह उपयोगी फसलें बोएगा, जिन्हें बेचकर वह आर्थिक लाभ उठा सके।" यह ग्रामीण विकास के लिए बापू की संकल्पना है, तैयारी है, पर इसके लिए बुनियादी जरूरत है तालीम की। गांधीजी का कहना है: "बुनियादी तालीम के आखिरी दर्जे तक शिक्षा सबके लिए लाजिमी होगी। जहां तक हो सकेगा, गांव के सारे काम सहयोग के आधार पर किए जाएंगे।"

एशियन ड्रामा में गुर्नार ने लिखा है: 'कहीं की गरीबी सर्वत्र उन्नति के लिए बाधक है' और गरीबी मिटती है आत्मजागरुकता से, जिसकी तैयारी प्राथमिक शिक्षा से ही हो सकती है तभी गांवों और देश का समग्र विकास संभव है।

(लेखिका एस.एस.एल.एन.टी.महिला पी.जी. कालेज धनबाद, झारखंड में अर्थशास्त्र विभाग में प्रोफेसर एवं अध्यक्ष हैं।)

केन्द्र प्रायोजित योजना "माध्यमिक शिक्षा के लिए लड़कियों को प्रोत्साहन" की शुरुआत

केंद्र प्रायोजित योजना "माध्यमिक शिक्षा के लिए लड़कियों को प्रोत्साहन" प्रारंभ कर दी गई है। योजना के अनुसार, किसी भी सरकारी अथवा सरकार द्वारा सहायता प्राप्त अथवा स्थानीय निकाय विद्यालय में कक्षा 11 में दाखिला लेने वाली प्रत्येक अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति की लड़की के नाम 3000 रुपए की धनराशि जमा की जाएगी और 18 वर्ष की आयु होने पर वह इसे निकालने की अधिकारी होगी। इस योजना में अनुसूचित जाति/जनजाति की सभी लड़कियां और कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय से कक्षा 8 उत्तीर्ण करने वाली सभी लड़कियां (चाहे वे अनुसूचित जाति/जनजाति से संबंधित न हो) एवं सरकारी सहायता प्राप्त और स्थानीय निकाय विद्यालयों में शैक्षिक वर्ष 2008–09 से कक्षा 9 में दाखिला लेने वाली सभी लड़कियां शामिल हैं। इस लाभ के लिए दाखिले वर्ष में 31 मार्च को दाखिले के समय अधिकतम आयु सीमा 16 वर्ष निर्धारित है।

वर्ष 2006–07 के बजटीय भाषण में, वित्तमंत्री ने आठवीं कक्षा की परीक्षा उत्तीर्ण करने और माध्यमिक विद्यालय में दाखिला लेने वाली बालिका विद्यार्थी को आर्थिक प्रोत्साहन प्रदान करने की घोषणा की थी। इसी घोषणा के आधार पर सरकार ने इस योजना की शुरुआत की है। इस योजना का उद्देश्य अनुसूचित जाति/जनजाति से संबंधित लड़कियों के माध्यमिक विद्यालय में दाखिले को प्रोत्साहन और 18 वर्ष की आयु तक उनकी शिक्षा को सुनिश्चित करना है। (पसूका)

बुनियादी शिक्षा की चुनौतियां व समाधान

डॉ. इन्दु पाठक

मानवाधिकारों के अन्तर्राष्ट्रीय घोषणापत्र (1948) में कहा गया था कि प्रत्येक मनुष्य को शिक्षा का अधिकार है और प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यता के आधार पर उच्च शिक्षा प्राप्त होगी। आज 60 वर्ष गुजर चुके हैं, घोषणापत्र के अनुरूप सबको उच्च शिक्षा प्रदान करने की बात तो छोड़िये, विश्व में प्राथमिक शिक्षा प्राप्ति का लक्ष्य भी पूरा नहीं किया जा सका है। अब संयुक्त राष्ट्र की सहस्त्राब्दी घोषणा में 2015 तक सम्पूर्ण विश्व में प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

वस्तुतः किसी भी राष्ट्र के विकास व समृद्धि के लिए सबसे आवश्यक तत्व है शिक्षा। विडम्बना देखिए कि आज जब हमारे देश में शिक्षा प्रत्येक बच्चे का मौलिक अधिकार है, देश में करोड़ों लोग ऐसे हैं जिन्हें साक्षर बनाया जाना है। लाखों बच्चे ऐसे हैं जो या तो स्कूल जाते ही नहीं हैं या प्राथमिक स्तर पर ही स्कूल छोड़ देते हैं। लाखों–लाख बच्चे ऐसे भी हैं, जो खेलने–पढ़ने की आयु में श्रमशक्ति में भागीदारी की बाध्यता के चलते शिक्षा से वंचित हैं। ऐसे 'कमाऊ' बच्चों के लिए शिक्षा की आवश्यकता हेतु भी एक निश्चित सोच आवश्यक है।

ब्लैकबोर्ड और बैठने के लिए चटाई जैसी सुविधा का अभाव

शिक्षा मानव जीवन का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य होने के साथ–साथ वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति का एक साधन भी है। शैक्षिक लक्ष्यों के सन्दर्भ में उच्च शिक्षा, तकनीकी व व्यावसायिक शिक्षा आदि की चर्चा, बुनियादी शिक्षा के लक्ष्यों तक पहुंचे बगैर अर्थहीन है। अतः शिक्षा से सम्बन्धित किसी भी चिन्तन में सबके लिए बुनियादी शिक्षा की चिन्ता अनिवार्यतः शामिल होनी चाहिए।

भारत में सार्वभौमिक बुनियादी शिक्षा के लिए प्रयास यद्यपि औपनिवेशिक काल में ही प्रारम्भ हो गये थे, परन्तु वास्तविक अर्थ में योजनाबद्ध ढंग से सभी बच्चों के लिए शिक्षा के प्रयास 1947 में स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात् ही प्रारम्भ हुए। इन प्रयासों के चलते यह सोचा गया कि सभी बच्चों को शिक्षित करने का लक्ष्य अल्पकाल में ही प्राप्त कर लिया जायेगा। परन्तु वयस्क शिक्षा दर व प्राथमिक विद्यालयों में नामांकन दर में निरन्तर वृद्धि के पश्चात् भी, आजादी के इन 60 वर्षों में भी इस लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया जा सका है। निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या इसका प्रमुख कारण है। तेजी से बढ़ती जनसंख्या के कारण यद्यपि संख्यात्मक रूप से निरक्षर अपर स्कूल तक न जाने वाले तथा प्राथमिक स्तर पर ही स्कूल छोड़ने वाले आज भी बहुत अधिक हैं परन्तु इस क्षेत्र में हुई महत्वपूर्ण प्रगति को अनदेखा भी नहीं किया जा सकता। वयस्क साक्षरता दर तथा बच्चों के स्कूल जाने की दर, जो कि 1950 में लगभग नगण्य थी, में पर्याप्त सुधार हुआ है तथा शैक्षिक प्रगति निरन्तरता बनाये हुए है। वर्ष 1951 में जो साक्षरता दर मात्र 18.33 प्रतिशत थी वही बढ़कर 1991 व 2001 तक क्रमशः 52.21 व 65.38 प्रतिशत हो गयी। वर्ष 1991 से 2001 के मध्य साक्षरता दर में 13.17 प्रतिशत की वृद्धि होना उल्लेखनीय माना जा सकता है। स्वतन्त्रता के तत्काल बाद की स्थिति से यदि वर्तमान स्थिति की तुलना की जाए तो शिक्षा के क्षेत्र में निश्चित रूप से हमने सार्थक उपलब्धियां अर्जित की हैं। प्राथमिक विद्यालयों की संख्या, प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों की संख्या तथा प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के नामांकन आदि में कई गुना वृद्धि हुई है। तो भी आज हमारी बुनियादी शिक्षा व इस शिक्षा व्यवस्था के समक्ष अनेक चुनौतियां विद्यमान हैं जिनके बारे में चिन्तन करना तथा उनके समाधान हेतु हमें प्रयास करना ही होगा। कुछ प्रमुख चुनौतियां इस प्रकार हैं–

- आज हमारे देश में शिक्षा से सम्बन्धित एक प्रमुख समस्या है शैक्षिक संसाधनों का असमान स्वरूप व उनका असमान विभाजन। हमारे शैक्षिक संसाधन व संस्थान, अपनी गुणवत्ता व सुविधा के आधार पर दो पूर्णतः विपरीत ध्रुवों पर नजर आते हैं। एक ओर श्रेष्ठतम गुणवत्ता व भौतिक सुविधाओं से युक्त निजी शैक्षिक संस्थान हैं तो दूसरी ओर लाखों–लाख बच्चों के लिए सार्वजनिक क्षेत्र के ऐसे स्कूलों में शिक्षा प्राप्त करने की बाध्यता है जो भवन, ब्लैकबोर्ड व बैठने के लिए चटाई जैसी न्यूनतम सुविधा भी छात्रों को उपलब्ध नहीं करा पाते हैं। इससे भी ऊपर है दुर्गम व अतिदुर्गम

स्थानों में शिक्षकों का अभाव। ये स्थितियां आज भी प्राथमिक शिक्षा के समक्ष कठिन चुनौती उत्पन्न कर रही हैं।

- बुनियादी शिक्षा के सन्दर्भ में ही एक प्रमुख समस्या है—विभिन्न क्षेत्रों व शैक्षिक संस्थानों में शिक्षा की गुणवत्ता व मानक में अत्यधिक भिन्नता का होना। इसी कारण पसंदीदा स्कूल की अवधारणा दिन—प्रतिदिन प्रबल होती जा रही है तथा यही कारण है कि एक और इण्टरमीडिएट के पश्चात् अच्छे कालेजों में 'कट आउट' 90 प्रतिशत से भी अधिक रहता है और दूसरी ओर उच्च गुणवत्ता वाले प्राथमिक शैक्षिक संस्थानों में, भारी—भरकम फीस देकर भी प्रवेश लेने को प्राथमिकता दी जाती है। अतः आवश्यकता है, स्कूलों में शिक्षण की गुणवत्ता बढ़ाने तथा समान शैक्षिक मानकों के अनुरूप स्कूलों को चलाने की।

- ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा से सम्बन्धित समस्याएं और भी जटिल हैं। यहां के अधिकांश स्कूलों में आधारभूत ढांचागत सुविधाओं का नितान्त अभाव है। उपयुक्त फर्नीचर, स्वच्छ पानी, शौचालय, पुस्तकालय, खेलने का मैदान जैसी आधारभूत सुविधाओं से वंचित स्कूलों में ही विद्यार्थियों को शिक्षा प्राप्त करनी पड़ती है। योग्य अध्यापकों का अभाव स्थिति को और भी विषम बना देता है। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की सबसे गहन समस्या है, बच्चों का कम संख्या में शिक्षा संस्थानों में नामांकन होना तथा प्राथमिक व माध्यमिक स्तर तक ही अधिकांश बच्चों का स्कूल छोड़ देना। लड़कियों के सन्दर्भ में यह समस्या और भी जटिल है। घरेलू कार्यों में संलग्नता, छोटे भाई—बहनों की देखभाल, पशुपालन में सहायता, तथा स्कूलों की निवास स्थान से अधिक दूरी वे मुख्य कारण हैं जो बालिकाओं के स्कूल न जाने या प्राथमिक स्तर पर ही स्कूल छोड़ देने के लिए उत्तरदायी रहे हैं।

- बुनियादी शिक्षा में उल्लेखनीय विस्तार के बावजूद, विभिन्न राज्यों के मध्य, तथा स्वयं राज्यों के अन्दर विभिन्न क्षेत्रों में शैक्षिक असमानताएं आज भी विद्यमान हैं। बुनियादी शिक्षा तक पहुंच के मामले में लैंगिक व सामाजिक असमानताएं भी बनी हुई हैं, अध्ययनों से पता चलता है कि कम और निम्नस्तर की शिक्षा पाने वालों में ज्यादातर दलित, व आदिवासी होते हैं और इनमें भी लड़कियां सबसे अधिक प्रभावित होती हैं। उल्लेखनीय प्रगति के बावजूद आज भी 6—14 आयुवर्ग के अनेक बच्चे बुनियादी शिक्षा से वंचित हैं।

- वस्तुतः भारतीय परिदृश्य इतना विविधतापूर्ण हैं कि इसे सकल राष्ट्रीय आंकड़ों द्वारा समझना अत्यन्त कठिन है। जहां केरल की साक्षरता दर 90 प्रतिशत से भी अधिक है, वहीं बिहार में प्रत्येक दो बच्चों में से केवल एक बच्चा स्कूल जा पाता है। 1990 के अन्त में अनुमान लगाया गया था कि देशभर में स्कूल न जा पाने वालों में तीन चौथाई 6 राज्यों—आन्ध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश व पश्चिमी बंगाल से थे। नामांकन दर में सर्वाधिक लैंगिक अन्तर बिहार (42 प्रतिशत) व उत्तर प्रदेश (31 प्रतिशत) में था। केरल व पंजाब जैसे राज्यों में यह अन्तराल मात्र 3 व 5 प्रतिशत था। सातवें अखिल भारतीय शिक्षा सर्वेक्षण के परिणाम 1990 से मिलती—जुलती स्थिति को ही स्पष्ट करते हैं। इसके अनुसार स्कूल न जाने वाले 69 प्रतिशत बच्चे आन्ध्र प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, मध्य प्रदेश, राजस्थान व पश्चिम बंगाल इन सात राज्यों से हैं। प्राथमिक विद्यालयों में न जाने वाले 33.87 प्रतिशत बच्चे तो अकेले बिहार व उत्तर प्रदेश से ही हैं। इस प्रकार सबके लिए बुनियादी शिक्षा के सन्दर्भ में आज भी अन्तर्राज्यीय असमानता बनी हुई है। इसके अतिरिक्त बालिका शिक्षा के सन्दर्भ में लैंगिक समानता के लक्ष्य को प्राप्त न कर पाना, आज भी समस्या बना हुआ है। यद्यपि विगत 10—15 वर्षों में लड़कियों का स्कूल जाना उल्लेखनीय रूप से बढ़ा है, परन्तु लैंगिक अन्तराल जस का तस है। 1951 से 2001 तक की जनगणना के आंकड़ों का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि यद्यपि इन वर्षों में स्त्री, पुरुष व कुल साक्षरता दर निरन्तर बढ़ी है परन्तु इसमें निरन्तर लैंगिक अन्तराल भी बना हुआ है जोकि हमेशा स्त्रियों के प्रतिकूल रहा है।

उम्मीद की जानी चाहिए कि अब जबकि 86वें संविधान संशोधन अधिनियम के द्वारा 5 से 14 आयुवर्ग के बच्चों के लिए 'शिक्षा का अधिकार' विधेयक को सहमति प्रदान कर दी गयी है, बच्चों द्वारा स्कूल छोड़ने जैसी समस्याओं में कमी आनी चाहिए। परन्तु अकेला विधेयक यह लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि शिक्षा ऐसी न हो कि वह न सिर्फ लोगों की सामाजिक, आर्थिक वास्तविकता से जुड़ी हो बल्कि उनकी 'समझ' के दायरे में भी हो। साथ ही शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य बच्चों में सृजनात्मक क्षमता का विकास, प्रौद्योगिकी के माध्यम से ज्ञान वृद्धि तथा विश्वास पैदा करना होना चाहिए जिससे कि वे आने वाले भविष्य को समझ सकें तथा उसका सामना कर सकें। बुनियादी शिक्षा की चुनौतियों व समस्याओं के समाधान के लिए हमें निश्चित रूप से कुछ उपायों को करना पड़ेगा। यद्यपि समग्र रूप से देखा जाए तो शैक्षिक स्थिति निश्चित रूप से पहले से बेहतर नजर आती है, परन्तु सबके लिए बुनियादी शिक्षा का लक्ष्य आज भी करीब नहीं लगता। थोड़े रणनीतिक बदलाव और वित्तीय प्रबन्धन करके इस लक्ष्य को प्राप्त करना सम्भवतः अधिक सरल होगा। कुछ बिन्दुओं पर चर्चा करना उचित होगा।

- सबसे पहले आवश्यक है समाज के सभी वर्गों, विशेषकर ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों के निर्धन लोगों को शिक्षा के प्रति जागरूक बनाने की। अल्पसुविधा प्राप्त लोगों को शिक्षा उपलब्ध करवाने के लिए हमें आवश्यक संसाधनों को गतिशील बनाना होगा। प्राथमिक शिक्षा के मामले में तो बहुत अधिक ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है। यद्यपि निजी क्षेत्र में प्राथमिक शिक्षा से सम्बन्धित महत्वपूर्ण व उपयोगी

प्रयास हुए हैं, परन्तु हमारा ग्रामीण तबका व निर्धन वर्ग जिस सार्वजनिक शिक्षा पर निर्भर हैं, वह आज भी अत्यन्त पिछड़ी स्थिति में है। इस हेतु दृढ़ता व ईमानदारी से ठोस उपाय किये जाने की आवश्यकता है। यद्यपि हमारे कुछ बड़े औद्योगिक घरानों ने शिक्षा के क्षेत्र में उपयोगी कार्य किए हैं, परन्तु इनके योगदान से मुख्यतः समाज का सुविधाभोगी वर्ग ही लाभान्वित हुआ है। आज आवश्यकता है हमारे औद्योगिक घरानों व कोरपोरेट जगत को इस प्रकार प्रेरित करने की कि वे पिछड़े व ग्रामीण क्षेत्रों में भी, विशेषकर बुनियादी शिक्षा के लिए प्रयास करें। समाज के पिछड़े, वंचित व निर्धन तबके तक बुनियादी शिक्षा को पहुंचाने के लिए विशेष प्रयास करने होंगे।

ग्रामीण क्षेत्रों में कम्प्यूटर शिक्षा प्राप्त करते बच्चे

- वस्तुतः शिक्षा व शिक्षा व्यवस्था वह नींव है जिस पर राष्ट्र व उसका भविष्य टिका होता है। अतः शिक्षा को गम्भीरता से लेते हुए सर्वव्यापी राष्ट्रीय शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए बजटीय आवंटन में अधिक वृद्धि करने पर भी ध्यान देना होगा। वर्तमान समय में शिक्षा पर किया जा रहा व्यय सकल घरेलू उत्पाद का 4 प्रतिशत से कुछ अधिक है। इसे 6–7 प्रतिशत तक किये जाने पर ही हम साक्षरता व शिक्षा के अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकने में सक्षम हो पायेंगे। सम्भवतः केन्द्र व राज्य सरकारों के लिए इस हेतु 2–3 प्रतिशत तक अतिरिक्त धनराशि जुटाना एकदम सम्भव न हो। ऐसी स्थिति में इस लक्ष्य के लिए अतिरिक्त संसाधन जुटाने हेतु निजी क्षेत्र तथा सामुदायिक सहभागिता को प्रोत्साहित करना भी एक अच्छा उपाय हो सकता है।

- ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा के लिये नवीन तकनीक के प्रयोग को अधिकाधिक बढ़ावा देना सार्थक परिणाम देने वाला हो सकता है। सूचना व संचार प्रणाली के तीव्र विकास का लाभ ग्रामीण बच्चों को भी मिलना चाहिए। संचार के क्षेत्र में हो रहे विस्तार तथा कम्प्यूटरों की कीमतें कम होने से प्रौद्योगिकी आधारित शिक्षा आर्थिक दृष्टि से भी सुगम होगी। नवीन तकनीक के ज्ञान व उपयोग से ग्रामीण बालक, शहरी बालक की तुलना में कमतरी व सापेक्षित वंचना के भाव से भी पीड़ित नहीं होगा तथा ज्ञान के उन स्रोतों तक उसकी पहुंच हो सकेगी जिनसे वह अभी तक वंचित रहा है। सूचना तकनीक का प्रयोग करके, वीडियो कान्फ्रैन्सिंग के जरिये भौगोलिक दृष्टि से अति दुर्गम स्थानों पर रहने वाले विद्यार्थियों को भी उच्चतम गुणवत्तायुक्त शिक्षा प्रदान की जा सकती है। इस ओर गम्भीरतापूर्वक प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। तभी शिक्षा व्यवस्था के दो विपरीत ध्रुव एक दूसरे के करीब आ सकेंगे तथा ग्रामीण विद्यार्थी भी स्वयं को अलग–थलग व वंचित महसूस नहीं करेगा। ग्रामीण क्षेत्रों के सन्दर्भ में यह भी आवश्यक होगा कि पाठ्यक्रम ग्रामीण जीवन की आवश्यकताओं से जुड़ा हो। यद्यपि रोजगार के राष्ट्रव्यापी अवसरों को देखते हुए, व्यापक राष्ट्रीय स्वरूप वाला ऐसा पाठ्यक्रम आवश्यक है जोकि बदलते हुए समाज की जरूरतों को पूरा कर सके। परन्तु साथ ही गांवो के लिए स्थानीय आवश्यकताओं से जुड़े हुए शिल्प व तकनीक को भी शैक्षिक पाठ्यक्रम का अंग बनाया जाना चाहिए।

- इस सन्दर्भ में एक महत्वपूर्ण बिन्दु होगा योजना के प्रत्येक पक्ष में लैंगिक सन्दर्भ शामिल किये जाने का। यह आवश्यक है कि बालिकाओं के लिये स्थानीय स्तर पर या निवास स्थान से कम दूरी पर स्कूल उपलब्ध हो। प्राथमिक विद्यालयों में अधिकाधिक महिला शिक्षकों की नियुक्ति भी एक सार्थक उपाय हो सकता है। प्राथमिक शैक्षिक स्तर पर अधिकाधिक बालिकाओं के नामांकन करवाने तथा इस स्तर पर ही उन्हें स्कूल छोड़ने से रोकने के लिए कुछ विशेष उपाय किये जाने चाहिए। विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में बालिकाओं की शिक्षा के प्रति उनके माता–पिता में बालिका शिक्षा के महत्व व सार्थकता की समझ उत्पन्न होने पर न सिर्फ प्राथमिक स्तर पर स्कूलों में बालिका नामांकन बढ़ेगा बल्कि स्कूल छोड़ने वाली लड़कियों की संख्या में भी कमी आयेगी।

- बुनियादी शिक्षा के प्रसार के सन्दर्भ में केन्द्र सरकार द्वारा किये गये प्रयासों में 'सर्व शिक्षा अभियान' उल्लेखनीय माना जा सकता है जिसके अन्तर्गत 2010 तक सभी के लिए बुनियादी शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त करने का वायदा है तथा यह समय 'डकार' में की गयी अन्तर्राष्ट्रीय वचनबद्धता से 5 वर्ष पहले है। अभियान के सन्दर्भ में यह ध्यान देना होगा कि सम्बन्धित योजनाएं राष्ट्रीय मानकों को ध्यान में रखकर ही नहीं, वरन् राज्यों की आवश्यकता के अनुरूप

भी निर्मित व अधिक विकेन्द्रित हों। इस सन्दर्भ में यह जांच करते रहना भी आवश्यक होगा कि राज्यों की रुचि केवल वित्तीय संसाधनों को प्राप्ति तक न बनी रहे बल्कि जमीनी स्तर पर कार्यक्रम सम्बन्धी गतिविधियां भी सक्रिय रूप से बनी रहें। साथ ही एक निश्चित अन्तराल पर कार्यक्रम का समग्र मूल्यांकन केंद्रीय एजेन्सी द्वारा किया जाना भी आवश्यक होगा। यह भी देखा जाना चाहिए कि कार्यक्रमों की समीक्षा व संशोधन में राज्यस्तरीय विशेषज्ञों की भागीदारी भी सुनिश्चित हो। बुनियादी शिक्षा के सन्दर्भ में यह तथ्य भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ न सिर्फ विद्यालयों की मांग बढ़ती जायेगी बल्कि इस हेतु ढांचागत विकास व उसका रखरखाव तथा शिक्षक व अध्यापन अधिगम सामग्री की मांग में भी वृद्धि होगी। केंद्रीय के साथ–साथ राज्य सरकारों को भी इस चुनौती का सामना करने को तैयार रहना होगा, तभी सबके लिए बुनियादी शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करना सम्भव होगा।

स्वतंत्र भारत के प्रथम शिक्षामन्त्री मौलाना अबुल कलाम आजाद ने 1948 में एक शिक्षा सम्मेलन में कहा था 'बुनियादी शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति का जन्मसिद्ध अधिकार है क्योंकि उसके बगैर वह बतौर नागरिक अपनी जिम्मेदारियां बखूबी नहीं निभा सकता'। परन्तु आज 2008 में भी यह सच है कि शिक्षा प्राप्ति के इस 'जन्मसिद्ध अधिकार' की अभी तक भी पूरी रक्षा नहीं हो पायी है। विश्व भर में जितने अशिक्षित लोग हैं, उनमें से एक बड़ी संख्या भारतीयों की है। शैक्षिक लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निरन्तर आगे बढ़ते रहने पर भी, सम्भवतः और अधिक योजनाबद्ध रूप व दृढ़ता से काम करने की आवश्यकता है। हमारे देश की विविधता व विशालता को देखते हुए यह स्वीकार करना होगा कि सभी के लिए बुनियादी शिक्षा की उपलब्धता की समस्या का कोई अखिल भारतीय समाधान नहीं हो सकता। अतः किसी भी योजना के निर्माण व अभियान के संचालन के लिए राज्यवार, जिलास्तर व ग्रामीण परिदृश्य को ध्यान में रखते हुए कार्य किया जाना चाहिए। आज यह भी देखा जा रहा है कि राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय वचनबद्धताओं के दबाव में बुनियादी शिक्षा की प्रगति का मात्रात्मक संकेतकों के आधार पर मूल्यांकन हो रहा है। विद्यालयों में सुविधाओं के विस्तार सम्बद्ध आयुवर्ग के बच्चों के नामांकन आदि के सन्दर्भ में संख्यात्मक उपलब्धियों की ही चर्चा की जाती है। इस आपूर्ति उन्मुख दृष्टिकोण के कारण ही स्कूल प्रणाली की आन्तरिक व बाह्य कुशलता बढ़ाने व शैक्षिक गुणवत्ता को विकसित कर सकने वाली प्रक्रियाओं की प्रायः अनदेखी भी हो सकती है। आज आवश्यकता है मात्रात्मक उपलब्धियों के साथ–साथ आन्तरिक कुशलता को बढ़ाने की। कुशलता व गुणवत्ता के बगैर केवल मात्रात्मक प्रगति का परिणाम दीर्घावधि में केवल अव्यावहारिक तथा अनुत्पादक ही होगा। विश्व की ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था का हिस्सा बनने के लिए हमें अपनी शैक्षिक संरचना का गुणात्मक व मात्रात्मक दोनों रूपों में विस्तार करना होगा।

(लेखिका कुमायूं विश्वविद्यालय, नैनीताल में समाजशास्त्र विभाग की रीडर हैं।)

आईटी सेवाएं ग्रामीण गरीबों तक पहुंची

दूरदराज क्षेत्रों में सरकारी, निजी एवं सामाजिक क्षेत्र की सेवाएं प्रदान करने के लिए आठ राज्यों में 10,300 से अधिक सामान्य सेवा केंद्र (सीएससी) स्थापित किए गए हैं। ये सेवाएं सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) विभाग की पहल हैं और इनमें आईटी आधारित तथा गैर–आईटी दोनों तरह की सेवाएं हैं। झारखंड, हरियाणा, पश्चिम बंगाल, बिहार, त्रिपुरा, गुजरात, तमिलनाडु और मध्य प्रदेश में इस तरह की सेवाएं प्रारंभ की गई हैं। ये केंद्र देश के छह लाख गांवों में एक लाख सामान्य सेवा केंद्र की स्थापना की सरकार की योजना के अंग हैं। इनमें से अधिकांश की स्थापना अगले वर्ष तक पूरे हो जाने की संभावना है।

यह योजना 5,742 करोड़ रुपए की कुल लागत से 4 वर्षों के लिए मंजूर हुई है। भारत सरकार योजना के लिए 856 करोड़ रुपये दे रही है तथा राज्य सरकारों को 793 करोड़ रुपए देने हैं। शेष धनराशि निजी क्षेत्र से जुटायी जाएगी। सामान्य सेवा केंद्र आईसीटी की कियोस्क, पीसी, प्रिंटर, स्कैनर, यूपीएस तथा वायरलैस कनेक्टिविटी से लैस होंगे। इससे शिक्षा–सह मनोरंजन टेलीमेडिसीन, प्रोजेक्शन सिस्टम आदि सुविधा मिलेगी। संबंधित राज्य सरकारें निविदा प्रक्रिया के जरिए केंद्रों की स्थापना का ठेका देती हैं। ठेके के क्रियान्वयन में करीब 12 महीने लगते हैं।

योजना का क्रियान्वयन सार्वजनिक–निजी साझेदारी के जरिए किया जा रहा है। ये केंद्र, कभी भी कहीं भी सरकारी सेवाएं उपलब्ध कराने की राष्ट्रीय ई–प्रशासन योजना के तीन स्तंभों में से एक हैं। दो अन्य हैं : (1) राज्यवार एरिया नेटवर्क कनेक्टिविटी के लिए और (2) राज्य डाटा केन्द्र योजना। केंद्र पहले ही राज्यवार एरिया नेटवर्क के लिए 3,338 करोड़ रुपए स्वीकृत कर चुका है। राज्य डाटा केंद्र योजना के क्रियान्वयन के लिए विभिन्न राज्यों में समितियां गठित की जा चुकी हैं।

सूचना प्रौद्योगिकी विभाग ने समूची गतिविधियों में समन्वय के लिए राष्ट्रीय स्तर पर सेवा एजेंसी नियुक्त की है। (पसूका)

गांवों में साक्षरता कार्यक्रम की पहल

के. जी. श्रीवास्तव

"मैं पिटती रही, लेकिन मैंने पढ़ना नहीं छोड़ा।" नई दिल्ली में प्रकाशित एक राष्ट्रीय स्तर के समाचार –पत्र में कुछ अर्से पूर्व बड़े शीर्षक में उपरोक्त पंक्ति थी और इसके नीचे विस्तृत समाचार के बीच एक लड़की का चित्र छपा था। समाचार क्या था बल्कि बिहार के सीतामढ़ी जिले के सुदूर गांव खोपटाहा की एक छोटी और भोली लड़की ललिता की भोली कल्पना, पढ़ाई के प्रति उसकी प्रबल उत्कंठा, और पढ़ाई के लिए उसके द्वारा किए गए संघर्ष की अभिव्यक्ति थी। पढ़िये इसे उसके शब्दों में – "चिड़ियों की तरह मैं आकाश में उड़ना चाहती हूं। मैंने जीवन को बहुत नजदीक से देखा है। खेतों में काम करते हुए, घर में बर्तन मांजते हुए, बकरियां चराते हुए मैंने पढ़ना सीखा। घर के लोगों को जब पता चला तो मेरी खूब पिटाई हुई। मां ने कहा तुम्हारे बदले काम कौन करेगा? पिता ने कहा लड़कियां पढ़कर क्या करेंगी ? भाई ने कहा कि हमारे घर की लड़कियां पढ़ती नहीं। तू पढ़ने नहीं जाएगी। मैं पिटती रही, लेकिन पढ़ना नहीं छोड़ा। आज मैं छठी जमात में पढ़ती हूं।"

ललिता जैसी और भी लड़कियां होंगी और इस जैसे लड़के भी होंगे, पर इनकी संख्या बहुत कम होगी। अतः आवश्यकता इस बात की है कि इनकी विशेषकर लड़कियों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि के सतत प्रयास किए जाएं।

एक तो स्कूल गांव से दूर उस पर जगह नहीं भरपूर

स्वतंत्रता प्राप्त होने के बाद केंद्र और राज्य सरकारों, स्वैच्छिक संगठनों आदि के प्रयासों के कारण ग्रामों में साक्षरता में वृद्धि तो हुई है, पर इसे संतोषप्रद नहीं कहा जा सकता। ग्रामों में साक्षरता में अपेक्षित सफलता न मिलने के क्या कारण हैं। इन पर गंभीरता से विचार करना और इनको यथाशीघ्र दूर करना ज़रूरी है। इस लेख में कुछ कारणों, इनके निवारण आदि के संबंध में चर्चा की गई है।

गांवों में संचालित पाठशालाओं में ऐसी पाठशालाएं भी हैं, जिनमें अधिक दूरी के कारण दूसरे ग्रामों के लड़के और लड़कियों का आना सम्भव नहीं हो पाता। जर्जर मकानों में लगने वाली पाठशालाओं की संख्या कम नहीं है जिनमें से अनेक के गिरने का खतरा बना रहता है। ऐसी पाठशालाओं में बरसात में पानी टपकने के कारण लड़के–लड़कियों का बैठना संभव नहीं हो पाता। जहां पाठशालाएं ग्रामों के प्रभावशाली व्यक्तियों की दालानों में लगती हैं, वहां अपवाद को छोड़ दें तो हरिजन लड़के और लड़कियों को आने नहीं दिया जाता अथवा इनके माता–पिता डर के कारण स्वयं नहीं भेजते। जहां पाठशालाओं के लिए भवन, दो दालानें उपलब्ध नहीं हैं, वहां पाठशालाएं वृक्षों के नीचे लगाई जाती हैं। ऐसी पाठशालाएं बरसात में बंद रखनी पड़ती हैं। पाठशालाओं में शौचालय का अभाव लड़कियों की उपस्थिति को प्रभावित करता है।

गांवों में यदि सभी लड़के और लड़कियों की सहज पहुंच के भीतर पाठशालाओं का संचालन हो, इनके लिए उत्तम भवन हों, इनमें फ्लश, शौचालय और पेयजल की व्यवस्था हो, ब्लैकबोर्डस, टाट–पट्टियां बैंचें, टेबल आदि उपलब्ध हों, शिक्षकों की आवश्यकतानुसार संख्या हो और इनकी बराबर उपस्थिति के साथ इनके द्वारा बेहतर तरीके से शिक्षण हो तो निश्चित ही पाठशालाओं में लड़के–लड़कियों की संख्या में वृद्धि होगी और पढ़ाई के स्तर में भी सुधार होगा।

पाठशालाओं में लड़के और लड़कियों के लिए 'मध्यान्ह भोजन योजना' का बेहतर तरीके से क्रियान्वयन पढ़ने आने वाले लड़के और लड़कियों की संख्या को न केवल कम होने से रोकेगा अपितु इसमें और वृद्धि में भी सहायक होगा।

ग्रामों में शिक्षा के संबंध में एक कहावत है कि 'थोड़ा पढ़ा तो गया हल से और ज्यादा पढ़ा तो गया घर से'। पढ़ना–लिखना सीखने से यह कहावत चरितार्थ न हो, इसलिए पाठशालाओं में पढ़ना–लिखना सिखाने के साथ पांचवीं और इस कक्षा से ऊपरी कक्षाओं के छात्र–छात्राओं को कृषि की महत्ता के अतिरिक्त

व्यक्तिगत तौर पर अथवा सहकारिता के आधार पर कुटीर उद्योग और डेरी उद्योग चलाने, बागवानी करने आदि के बारे में बताया जाना चाहिए ताकि वे अपनी पढ़ाई समाप्त करने और बड़े होने के बाद स्वरोजगार द्वारा अपने पैरों पर खड़े हो सकें, और अपना ग्राम न छोड़ें। पाठशालाओं के पास ही उत्पादन केंद्र बनाए जाएं और राज्य सरकार और खादी व ग्रामोद्योग बोर्ड के सहयोग से चुनी हुई वस्तुएं जैसे सूत कातना, अगरबत्ती बनाने आदि में छात्र–छात्राओं को प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की जाए तो और अच्छा होगा।

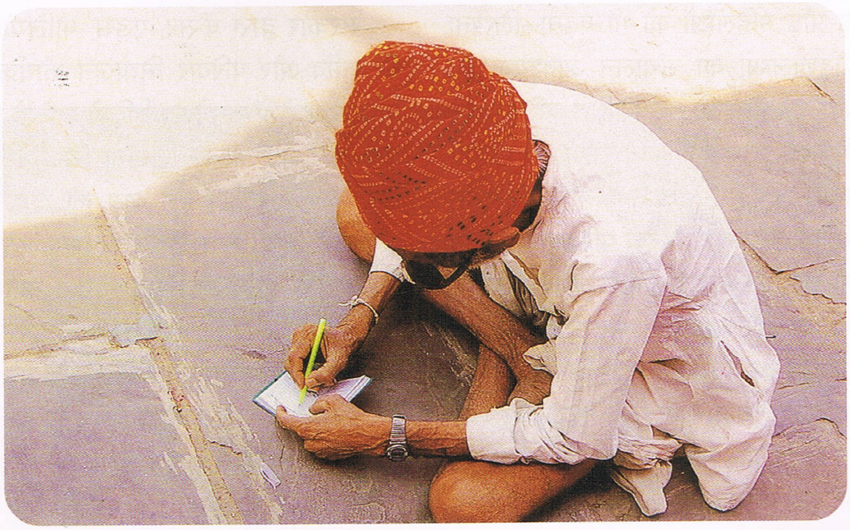

प्रौढ़ शिक्षा साक्षरता का बेहतर कार्यक्रम

ग्रामों में शिक्षण कार्य को और उपयोगी बनाने के लिए छात्र–छात्राओं को साफ–सफाई, पर्यावरण की सुरक्षा, वृक्षारोपण, पानी की बचत, पल्स पोलियो खुराक व आयोडीनयुक्त नमक की आवश्यकता आदि के बारे में अच्छी तरह समझाया जाना चाहिए और इस संबंध में उनसे प्रश्न पूछे जाने चाहिए। छात्र–छात्राओं से ये सब बातें अपने परिवारों के सदस्यों को बताने के लिए कहा जाना चाहिए।

गांवों में चल रही पाठशालाओं में पढ़ा रहे शिक्षकों को पढ़ाने के अलावा छात्र–छात्राओं को अन्य उपयोगी जानकारी देने में समर्थ बनाने की दृष्टि से उनको अल्पकालीन प्रशिक्षण दिलाना चाहिए। साथ ही इस कार्य के लिए उनको प्रति माह कुछ धनराशि देनी चाहिए।

यहां बड़ी संख्या में लड़के–लड़कियों के शिक्षा से वंचित रहने और साक्षरता प्रसार में अवरोधक बनने में एक बड़ा कारण ग्रामीण गरीबी भी है। ग्रामों में अधिकांश परिवारों को दो समय की रोटी के लिए अथक श्रम करना पड़ता है। परिवार के प्रत्येक सदस्य, यहां तक उन लड़के–लड़कियों को, जिनकी उम्र मेहनत के काम करने लायक नहीं है, किसी न किसी कार्य में लगा दिया जाता है। जब तक इन ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति में सुधार नहीं आता, तब तक यह आशा करना उचित नहीं होगा कि ऐसे परिवारों के सभी लड़के–लड़कियां पाठशाला पहुंचेंगे और यदि पहुंच गये तो बीच में पढ़ाई बंद नहीं कर देंगे।

ग्रामों में लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने और उनकी आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए केंद्र व राज्य सरकारों द्वारा विभिन्न योजनाएं क्रियान्वित की जा रही हैं। इनमें केंद्र सरकार की रोजगार गारंटी योजना भी सम्मिलित है। सभी योजनाओं के परिणाम संतोषप्रद हों, इसके लिए न केवल इन सबका कारगर ढंग से क्रियान्वयन आवश्यक है, अपितु योजनाओं के अंतर्गत हुई प्रगति की सही समीक्षा और इसमें सामने आई खामियों को दूर करना भी आवश्यक है। यदि ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति में अच्छा सुधार होता है तो इनमें से अधिकांश अपने लड़के–लड़कियों को विभिन्न कामों में लगाने की बजाय पढ़ना–लिखना सीखने के लिए पाठशाला भेजना आवश्यक समझेंगे।

गांवों में साक्षरता कार्यक्रम के अन्तर्गत अनपढ़ प्रौढ़ पुरुषों और महिलाओं को पढ़ना–लिखना सिखाने के लिए रात्रिकालीन प्रौढ़शालाओं का संचालन किया जाना चाहिए। ये शालाएं पुरुषों और महिलाओं के लिए पृथक–पृथक होनी चाहिएं।

ग्रामों में जहां लड़के और लड़कियों के लिए पाठशालाएं हैं वहां इनके शिक्षकों को ग्रामों के अशिक्षित प्रौढ़ पुरुषों को रात्रि में पढ़ना–लिखना सिखाने का कार्य अतिरिक्त वेतन पर दिया जा सकता है। प्रौढ़शालाओं के लिए ब्लैकबोर्ड्स, चाक, स्लेटे, बत्तियां, पुस्तकें आदि उपलब्ध कराये जाने चाहिए। प्रौढ़ों को प्रौढ़शालाओं में आने के लिए प्रेरित करने की दृष्टि से मनोरंजन की व्यवस्था होनी चाहिए। पढ़ाई के बाद भजन व लोकगीतों का कार्यक्रम रखा जा सकता है। यदि प्रौढ़शालाओं के लिए हारमोनियम, ढोलक, मजीरे, टीवी या रेडियो उपलब्ध करा दिये जाएं तो फिर कहना ही क्या! प्रौढ़ों को पढ़ना–लिखना सिखाने के साथ जनजागरुकता लानी भी जरूरी है। उन्हें परिवार नियोजन, पल्स पोलियो खुराक और आयोडीनयुक्त नमक की आवश्यकता, मलेरिया, कैंसर, एड्स आदि से बचने के उपाय, अंधविश्वासों में न पड़ने, पानी का समझदारीपूर्ण उपयोग, पर्यावरण की सुरक्षा, वृक्षारोपण, अनावश्यक व्यय से बचने आदि के बारे में भी बताया जाना चाहिए।

ग्रामीण अंचल में अनपढ़ प्रौढ़ महिलाओं को भी पढ़ना–लिखना सिखाने के लिए महिला प्रौढ़शालाओं का संचालन आवश्यक है। ग्रामों की पाठशालाओं में पढ़ा रहे शिक्षकों की शिक्षित पत्नियों को उचित वेतन अथवा पारिश्रमिक के साथ यह कार्य सौंपा जा सकता है। इन प्रौढ़शालाओं में भी पढ़ना–लिखना सिखाने के साथ मनोरंजन की व्यवस्था होनी चाहिए। यही नहीं उनको उनके परिवार और गांव के हित की बातें बताई जानी चाहिए। महिला प्रौढ़शालाओं में पढ़ाने के लिए नियुक्त शिक्षिकाओं को अल्पकालीन आवश्यक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ताकि वे शिक्षण का कार्य बेहतर ढंग से कर सकें।

ग्रामों में यदि महिला प्रौढ़शालाएं चलाने के लिए शिक्षिकाओं की उपलब्धता संभव नहीं है तो पुरुष प्रौढ़शाला में पढ़ रहे प्रौढ़ों को अपने परिवारों की महिलाओं को पढ़ना–लिखना सिखाने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। एक प्रौढ़ पुरुष जो प्रौढ़शाला में सीखे, वही अपनी पत्नी को सिखा सकता है। ग्रामों की पाठशालाओं में पांचवीं और इससे ऊपर की कक्षाओं में पढ़ रहे लड़के और लड़कियां सिखा सकते हैं। शिक्षकों द्वारा उनको इस बात के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। जो लड़के और लड़कियां इस कार्य में सफलता प्राप्त करें, उनको प्रमाणपत्र और कुछ धनराशि पंचायतों द्वारा दी जानी चाहिए।

गांवों में साक्षरता कार्यक्रम के अन्तर्गत संतोषजनक सफलताएं सुनिश्चित करने के लिए इस संबंध में सतत प्रचार–प्रसार भी बहुत आवश्यक है। इसके लिए शिक्षा विभाग, स्वैच्छिक संगठनों, महिला कल्याण बोर्ड आदि द्वारा ग्रामों में बैठकें आयोजिक करने के अलावा शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रेरित करने वाले नाटकों का आयोजन और प्रेरित करने वाली फिल्मों का प्रदर्शन किया जाना चाहिए।

सरकार द्वारा कैंसर, एड्स, पोलियो आदि खतरनाक बीमारियों से बचाव और परिवार नियोजन कार्यक्रम संबंधी प्रचार–प्रसार पर प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये खर्च किये जा रहे हैं। ग्रामों में प्रौढ़ पुरुषों और महिलाओं को पढ़ना–लिखना सिखाने के कार्य में अच्छी सफलता प्राप्त कर न केवल इस व्यय को कम किया जा सकता है अपितु उपरोक्त कार्यों में संतोषजनक सफलताएं भी प्राप्त की जा सकती हैं। क्योंकि यदि प्रौढ़ पुरुष और महिलाएं पढ़ना–लिखना सीख जाते हैं तो उनको खतरनाक बीमारियों से बचाव और परिवार नियोजन की महत्ता की बातें अच्छी तरह समझ में आने लगेंगी। वे इन बातों में पूरी दिलचस्पी लेंगे और इन पर अमल भी करने लगेंगे। इसे ध्यान में रखते हुए सरकार को प्रौढ़ शिक्षण कार्यक्रम पर व्यय राशि बढ़ानी चाहिए।

वर्तमान में यह अनुभव किया जाने लगा है कि सभी लड़के–लड़कियों को शिक्षा देने के साथ उनमें सुसंस्कार डालना भी परमावश्यक है। वस्तुतः लड़के और लड़कियों में सुसंस्कार डालने का कार्य माता–पिता और शिक्षक दोनों का है। विद्यालयों में इस महान कार्य को करने के लिए शिक्षकों में "शिक्षण में कुशलता' और अपने कार्य के प्रति निष्ठा के अतिरिक्त अपने आचरण में श्रेष्ठता, निडरता आदि गुणों का भी समावेश होना आवश्यक है।

शिक्षकों से जब महानतम दायित्व निर्वाह की आशा की जाती है तो यह आवश्यक है कि उनका सतत सम्मान किया जाए, उनकी सेवाओं पर आंच नहीं आने दी जाए, उनको उचित वेतन–भत्ते प्राप्त हों, उनका शोषण न हों, उनकी समस्याओं का यथा समय समाधान हो, और उनको दूसरे कार्यों में नहीं लगाया जाए।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

माध्यमिक शिक्षा के लिए लड़कियों की राष्ट्रीय प्रोत्साहन योजना

आर्थिक मामलों की मंत्रिमंडलीय समिति ने केंद्र द्वारा प्रायोजित माध्यमिक शिक्षा के लिए लड़कियों को प्रोत्साहन संबंधी योजना को मंजूरी दे दी है। 11वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान योजना की कुल लागत 1500 करोड़ रुपए है।

इस योजना के दायरे में अजा/अजजा लड़कियों को रखा गया है जिन्होंने कक्षा आठ उत्तीर्ण कर ली हो। इसके अलावा उन लड़कियों को भी इसके दायरे में रखा गया है जिन्होंने राज्य सरकारों/ केंद्रशासित प्रदेशों, सरकार द्वारा सहायता प्राप्त स्कूलों या स्थानीय निकायों के स्कूलों में कक्षा नौ में प्रवेश ले लिया हो। इस योजना से विवाहित लड़कियों को बाहर रखा गया है। निजी गैर– सहायता प्राप्त स्कूलों की लड़कियों को भी इस दायरे से बाहर रखा गया है क्योंकि इन स्कूलों की फीस बहुत ज्यादा होती है और चूंकि यहां पढ़ने वाली लड़कियों के माता–पिता उक्त फीस देने में सक्षम हैं, इसलिए उन्हें किसी तरह की वित्तीय सहायता की आवश्यकता नहीं है। जिन लड़कियों ने केंद्र सरकार के स्कूलों में प्रवेश लिया है, उन्हें भी योजना से बाहर रखा गया है।

इस योजना के तहत लाभ उठाने वाली लड़कियों के लिए आवश्यक है कि जब वे कक्षा नौ में प्रवेश लें तो वे अविवाहित हों और 31 मार्च, 2008 तक 16 वर्ष से कम हों। इसके अतिरिक्त यह योजना कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों से कक्षा आठ उत्तीर्ण लड़कियों के लिए भी है चाहे वे अजा/अजजा वर्ग की हों, या न हों। (पसूका)

झारखंड : पेट छुड़ाए स्लेट

संदीप कुमार

चौदह साल तक के बच्चों के लिए शिक्षा को मौलिक अधिकार बना दिया गया है लेकिन जमीनी हकीकत कुछ और बयां करती है। देश के नए-नवेले बने राज्य झारखंड की बात करें तो आंकड़े हैरान करने वाले नजर आएंगे। सरकारी प्रयासों के बावजूद झारखंड के स्कूलों में ड्रॉपआउट थमता नहीं दिख रहा। ड्रॉपआउट की वजह तो और भी हैरान करने वाली हैं। पेट की चिंता बच्चों के हाथों से स्लेटें छिनवा रही है। हाल ही में झारखंड एजुकेशन प्रोजेक्ट काउंसिल (जेईपीसी) की एक रिपोर्ट बताती है कि झारखंड में स्कूलों से ड्रॉपआउट करने वाले अधिकांश बच्चों की वजह है रोजी-रोटी की चिंता। काउंसिल की ये रिपोर्ट 6 साल से 14 साल तक के उन बच्चों पर आधारित है जिन्होंने अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़ दी। रिपोर्ट के मुताबिक अधिकांश बच्चे (52 फीसदी) इसलिए बीच में स्कूल छोड़ देते हैं क्योंकि उन पर कमाने-धमाने और घरेलू कामों में हाथ बंटाने का भार डाल दिया जाता है।

पेट छुड़ाए स्लेट

झारखंड एजुकेशन प्रोजेक्ट काउंसिल की ये रिपोर्ट आई है अलग-अलग एजेंसियों और स्वयंसेवी संस्थाओं के सर्वे के आधार पर। सर्वे में झारखंड के स्कूलों से ड्रॉपआउट किए 6-14 साल तक के उन 25 हजार 703 स्कूली बच्चे-बच्चियों को शामिल किया गया जिन्हें अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़नी पड़ी। सर्वे का मकसद था ये पता लगाना कि आखिर इन बच्चों को अपनी पढ़ाई किस वजह से छोड़नी पड़ी। रिपोर्ट में ड्रॉपआउट के लिए मुख्य रूप से चार वजह सामने आईं।

पहली वजह तो यही थी कि बच्चों पर दो पैसा कमाने का बोझ था। इस वजह से स्कूल छोड़ने वाले बच्चों का प्रतिशत 26.39 था। घरेलू और पारंपरिक कामों में लग जाना दूसरी मुख्य वजह रही स्कूल ड्रॉपआउट की। 25.44 फीसदी बच्चों के हाथों से इसलिए कलम-कॉपी छूट गई क्योंकि उन पर घरेलू कामों में हाथ बंटाने का भार डल गया था। रिपोर्ट स्कूल छोड़ने की एक तीसरी वजह की ओर भी इशारा करती है और वो है बच्चों का मनमौजीपन। स्कूल छोड़ने वालों में से 12.25 प्रतिशत ऐसे बच्चे भी हैं जिनका पढ़ने-लिखने में मन ही नहीं लगता था। लेकिन सामाजिक वजहों से भी छात्र-छात्राओं का स्कूल से नाता टूटा। ड्रॉपआउट की ये चौथी वजह है जिसके चलते आठ फीसदी बच्चों को बीच में ही स्कूल को बॉय-बॉय करना पड़ा।

अहम सवाल ये है कि आखिर छोटी उम्र में ही बच्चों पर दो पैसे कमाने का बोझ पड़ता ही क्यों है? इस सवाल के बीच झारखंड के आर्थिक हालात भी छुपे हुए हैं। जेईपीसी की रिपोर्ट के मुताबिक परिवार के लिए पैसा कमाने या फिर पारिवारिक-पारंपरिक रोजगार में हाथ बंटाने की वजह से ही ज्यादातर ड्रॉपआउट (52 फीसदी) हुए हैं। झारखंड में ड्रॉपआउट करने वाला हर दूसरा बच्चा रोजी-रोटी की चिंता में ही स्कूल छोड़ता है। कहने में हिचक नहीं होनी चाहिए कि झारखंड में गरीबी और रोजगार का अभाव ही ड्रॉपआउट की मुख्य वजह है। आंकड़े इसके गवाह भी हैं। झारखंड में 54 फीसदी लोग गरीबी-रेखा से नीचे रहते हैं और स्कूल छोड़ने

झारखंड में स्कूलों से 6-14 साल के बच्चों के ड्रापआउट की वजह का लेखा-जोखा

	ड्रॉपआउट की वजह	प्रतिशत
1.	दो पैसे कमाने की चिंता	26.39
2.	घरेलू कार्यों में लग जाना	25.44
3.	पढ़ने में मन न लगना	12.25
4.	सामाजिक वजह	08.00

वाले 52 फीसदी बच्चे रोजी–रोटी की चिंता में पढ़ाई छोड़ देते हैं। इन दोनों ही आंकड़ों में काफी साम्यता है। यानी कि अभिभावकों की गरीबी और बेरोजगारी का बच्चों पर इस कदर प्रभाव पड़ रहा है कि उनसे स्कूल और स्लेट छूटता जा रहा है।

आंकड़ों की गवाही है कि झारखंड का हर दूसरा परिवार गरीबी–रेखा से नीचे जीता है। यूं तो झारखंड एक तरह से देश की खनिज राजधानी है और यहां की माटी सोना उगलती है। बावजूद इसके यहां के लोगों को दो जून की रोटी के जुगाड़ के लिए महानगरों का मुंह जोहना पड़ता है। पापी पेट पलायन को मजबूर करता है। झारखंड के कई गांव ऐसे हैं जहां अधिकांश परिवार मर्दविहीन मिलेंगे। वजह है गांव से बाहर जाकर कमाना–धमाना। ऐसे में परिवार में महिलाएं और बच्चे ही बच जाते हैं। कमाने वाला एक होता है और खाने वाले कई। कई दफा परिवार के मुखिया की कमाई से भी परिवार नहीं चल पाता है। ऐसे हालात में घर पर पल–बढ़ रहे छोटे–छोटे बच्चों पर परिवार की कमाई में इजाफा करने का भार आन पड़ता है और फिर बच्चों को छोटी उम्र में ही स्कूल छोड़कर कमाने–धमाने पर ध्यान देना पड़ता है। तभी तो कम उम्र के बच्चों को होटलों में प्लेटे मांजते या फिर किसी गैराज में नट–बोल्ट कसते हुए अक्सर देखा जाता है। और तो और अब बड़ों के साथ–साथ नाबालिग बच्चे भी कमाई–धमाई के लिए भारी संख्या में शहरों–नगरों में पलायन करते देखे जा रहे हैं।

कई ऐसे पारिवारिक और पारंपरिक काम भी होते हैं जहां हाथ बंटाने के लिए नए सदस्य की जरूरत होती है और ये जरूरत घर के ही नए बच्चों से पूरी की जाती है वो भी पढ़ाई की कीमत पर। खेती इसका अहम उदाहरण है। छोटी उम्र में ही बच्चे घर की खेती–गृहस्थी के काम में जुट जाते हैं। लड़कियां भी फसलों की बुआई–कटाई में फंस जाती हैं और पीहर छूटने से पहले स्कूल ही छूट जाता है। बढ़ई, मोची, राजमिस्त्री, दर्जी, जुलाहे, सुनार, हजाम, लुहार, धोबी जैसे पारंपरिक काम में तो बेहद कम उम्र में ही बच्चे अपने बड़ों का हाथ बंटाने लगते हैं। हालांकि विपरीत परिस्थितियों में भी गरीब और बेबस परिवार के बच्चे पढ़ते हैं और आगे भी बढ़ते हैं लेकिन इतना तो जरूर कहा जा सकता है कि ऐसी परिस्थितियों में अधिकांश बच्चों को घुटने टेकने पड़ते हैं और स्कूल छोड़ना पड़ता है।

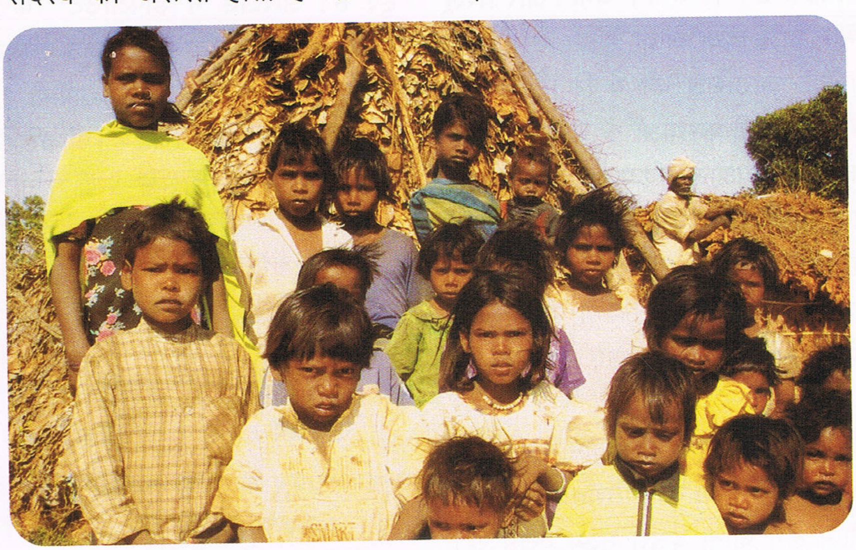

पढ़ाई का नहीं रोजी–रोटी का भार इनके कंधों पर

चूंकि गरीबी और बेरोजगारी के चलते भारी संख्या में लोगों को रोजी–रोटी के लिए झारखंड से बाहर काम करने के लिए जाना पड़ता है। ऐसी स्थिति में उनके बच्चे अपने हाल में जीने को मजबूर हो जाते हैं। कई बच्चे तो घर की महिलाओं से संभाले भी नहीं संभलते और फिर नादानी में मनमानी करने लगते हैं। पढ़ाई की ओर ध्यान नहीं देते और फिर एक दिन ऐसा भी आता है जब अनमने होकर वो पढ़ाई छोड़ देते हैं। चूंकि ऐसे बच्चों को प्रेरित करने वाला कोई नहीं होता सो वो बहक जाते हैं और स्कूल जाने के बजाय मनमानी करने लगते हैं। झारखंड में ड्रॉपआउट करने वाले बच्चों में से 12.25 फीसदी बच्चे ऐसी ही स्थिति में पढ़ाई छोड़ देते हैं।

लेकिन ड्रॉपआउट करने वाले बच्चों का आठ फीसदी जिस वजह से पलायन करता है वो एक खतरनाक सामाजिक संकट की ओर इशारा करता है। ये आठ फीसदी हिस्सा उन बच्चों का है जिन्हें सामाजिक–सांस्कृतिक वजह से स्कूल छोड़ना पड़ता है। इस वजह विशेष से स्कूल छोड़ने वालों में अधिकतर संख्या लड़कियों की होती है। आज भी ग्रामीण इलाकों में लड़कियों को रसोई और खेतीबाड़ी तक सीमित माना जाता है। पढ़–लिख कर क्या करेंगी ? का जुमला लड़कियों को रोज सुनना पड़ता है। स्कूल अगर थोड़ी दूर हो तो यह कहकर उन्हें स्कूल जाने से हतोत्साहित किया जाता है कि लड़की जात कहां–कहां अकेली भटकती फिरेगी। कई बार तो समाज और

परिवार ही नहीं चाहता कि लड़कियां घरों से निकलकर बाहर पढ़ने जाएं। और फिर ऐसी स्थिति आन पड़ती है कि पीहर छूटने से पहले ही स्कूल छूट जाता है। हालांकि सरकार ने अनुसूचित जाति–जनजाति की लड़कियों को प्रोत्साहित करने के लिए साइकिल देने का काम किया है। लेकिन कई इलाकों में आज भी संकोचवश लड़कियां साइकिल चलाकर स्कूल नहीं जातीं। बाल–विवाह भी बालिका शिक्षा में विलेन की भूमिका निभाता है। छोटी उम्र में विवाह होने का मतलब है कि हमेशा के लिए पढ़ाई को अलविदा कहना। कहते हैं कि किसी परिवार के आगे बढ़ने में एक शिक्षित लड़की की भूमिका उल्लेखनीय होती है पर जब लड़कियों को पढ़ने से रोका जाएगा तो परिवार का सर्वांगीण विकास तो अधर में लटकेगा ही।

सरकार तमाम कोशिशें करने की बात कहे पर शिक्षा से जुड़े आधारभूत ढांचे की बात करें तो मामला साफ हो जाएगा। 2001 की जनसंख्या के मुताबिक झारखंड में 6 से 14 साल के बच्चों की आबादी 52 लाख 54 हजार 347 है जिसमें बालकों की संख्या 27 लाख 58 हजार 523 है और बालिकाएं 24 लाख 95 हजार 824 की संख्या में हैं। 6 से 14 साल के बच्चों की आबादी झारखंड की पूरी आबादी का तकरीबन 20 फीसदी है। लेकिन बात सिर्फ 20 फीसदी आबादी की शिक्षा की नहीं है बल्कि उस भविष्य की है जिस पर देश और प्रदेश का कल टिका हुआ है। सरकारी आंकड़े खुद कहते हैं कि साढ़े बावन लाख की इन बच्चों की आबादी के पढ़ने के लिए झारखंड में प्राथमिक विद्यालय 16, 840 और मध्य विद्यालय 3, 911 हैं। यानी कि 20751 स्कूलों पर जिम्मा है साढ़े बावन लाख बच्चों को पढ़ाने का और अगर स्कूलों की संख्या में सर्व शिक्षा अभियान के 15,316 केंद्रों को भी जोड़ दें तो झारखंड में 6–14 साल तक के बच्चों को पढ़ाने के लिए महज 36,067 केंद्र ही हैं। इन लाखों बच्चों को पढ़ाने के लिए प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों में कुल 51,422 शिक्षक ही हैं। सरकारी आंकड़ों में खुद 68,470 शिक्षकों के होने की बात कही गई है पर कार्यरत शिक्षक तो 25 फीसदी कम ही हैं। यानी सरकारी प्रयास में भी सुधार की बेहद जरूरत है।

झारखंड में साक्षरता दर महज 54 फीसदी है जो राष्ट्रीय साक्षरता दर के 65 फीसदी से बेहद कम है। अगर झारखंड के आदिवासियों में साक्षरता दर की बात करें तो यह तो और भी कम है। महज 40 फीसदी आदिवासी ही साक्षर हैं। जरूरी है कि झारखंड की साक्षरता दर और आदिवासियों की साक्षरता दर को कम–से–कम राष्ट्रीय साक्षरता दर के करीब तो लाया ही जाए। इसके लिए सरकारी प्रयास के साथ–साथ सामाजिक पहल की भी जरूरत है। सबसे जरूरी है उस मानसिकता को खत्म करने की कि पढ़ने–लिखने से क्या होता है।

सुकून की बात ये है कि झारखंड के स्कूलों में मिड–डे मील योजना चल रही है और बच्चों को खाने के लिए दोपहर में भोजन भी मिल ही जाता है। लेकिन सवाल सिर्फ बच्चे के खाने का नहीं है, मुद्दा है परिवार का पेट पालने का और ऐसे में स्कूल छूटता है, पढ़ाई छूटती है और नन्ही–नन्ही आंखों से भविष्य का उज्ज्वल सपना भी छूटता–टूटता–बिखरता जाता है।

(लेखक टीवी पत्रकार हैं)

ई–मेल : sandybaba81@yahoo.com

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के लिए वेब-आधारित नया साफ्टवेयर

ग्रामीण विकास मंत्रालय ने www.nrega.nic.in नामक एक वेबसाइट विकसित की है। इसका उद्देश्य राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (नरेगा) की संचालन प्रक्रिया में दक्षता और पारदर्शिता में सुधार लाना और नरेगा से संबंधित सभी जानकारी को एक कंप्यूटर डाटाबेस में उपलब्ध कराना है ताकि आम जनता के लिए यह सुविधा उपलब्ध हो सके। राज्यों द्वारा इसके संचालन की समीक्षा और इसे त्वरित बनाने हेतु मंत्रालय ने एक राष्ट्रीय कार्यशाला का भी आयोजन किया है। यह डाटा रिकार्डों के सत्यापन के साथ ही अधिनियम के किसी भी मानदंड पर रिपोर्ट तैयार करने हेतु साफ्टवेयर पर आधारित है। इस सॉफ्टवेयर में स्थानीय भाषा में सुविधाएं उपलब्ध हैं। इसलिए यह विशेषकर जिला और प्रखंड स्तरों पर पूरे देश में आसानी से उपयोग करने लायक है।

यह वेबसाइट न केवल आंतरिक प्रबंधन का एक उपकरण है बल्कि यह बाहरी संचार के लिए भी उतनी ही उपयोगी है क्योंकि इसके माध्यम से नरेगा के क्रियान्वयन के बारे में पूरी जानकारी जनता के सामने रखी जाती है। उपलब्ध कराए गए सभी जॉब कार्डों और मस्टर रॉलों को नरेगा वेबसाइट पर रखा जाता है। जब यह वेबसाइट पूरी तरह संचालित हो जाएगी तब नागरिकों के लिए सूचना का अधिकार संबंधी वैधानिक प्रक्रियाओं को जानना सुलभ हो जाएगा। (पसूका)

गाजर घास का बढ़ता प्रकोप

डॉ. सुनील कुमार खण्डेलवाल

गाजर घास का वैज्ञानिक नाम पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस है। यह एक बहुत ही हानिकारक खरपतवार है जो देश के विभिन्न भागों में बहुतायत में पाया जाता है। यह एस्टेरेसी परिवार का सदस्य है। गाजर घास को विभिन्न क्षेत्रों में अलग– अलग स्थानीय नामों से जाना जाता है। इन नामों के पीछे पौधे की विशेषता छिपी हुई है। इसकी पत्तियां गाजर या क्राइसेन्थियम की पत्तियों के समान होने के कारण इसे गाजर घास कहते हैं। इसके फूल सफेद रंग के होते हैं इसलिए इसे चटक चांदनी या सफेद टोपी (व्हाइट टॉप या व्हाइट हेड) भी कहा जाता है। गाजर घास को कांग्रेस घास, गजरी, गांधी बूटी, फाल्स रेगवीड एवं अमेरिकन फीवर फ्यू आदि नामों से भी जाना जाता है।

उत्पत्ति स्थानः गाजर घास का उत्पत्ति स्थान वेस्टइंडीज और अमेरिका है। हमारे देश में गाजर घास को वर्ष 1951 में अमेरिका से आयातित अनाज गेहूं के साथ लाया गया। सर्वप्रथम यह खरपतवार महाराष्ट्र में पूना में वर्ष 1956 में दिखाई दिया। आज गाजर घास का उत्पत्ति स्थान अमेरिका इसकी समस्या से इतना प्रभावित नहीं है, जितना विश्व के अन्य देश। यदि गाजर घास से प्रभावित देशों को मानचित्र पर दर्शाया जाये तो सबसे अधिक प्रभावित देश भारत ही दिखेगा। आज भारत, अमेरिका और वेस्टइंडीज के अलावा गाजर घास से प्रभावित अन्य देशों में दक्षिण अफ्रीका, मैक्सिको, चीन, बांग्लादेश, नेपाल, ताइवान, वियतनाम, मेडागास्कर, केन्या, मोजाम्बिक, इजराइल तथा आस्ट्रेलिया आदि प्रमुख हैं।

परिचयः गाजर घास की विश्व में 15 जातियां पायी जाती हैं। इनमें से पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस ही सबसे अधिक हानिकारक है। बहुत अधिक बीजोत्पादन के कारण ही इसका नाम पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस रखा गया है। इसके पौधे वार्षिक होते हैं व ऊंचाई 2 मीटर तक होती है। गाजर घास की पत्तियां व तनों पर छोटे–छोटे सफेद रोम पाये जाते हैं, जिन्हें ट्रायकोम्स कहते हैं। इसकी पत्तियां गहराई तक कटी हुई तथा तना शाखीय होता है। इसके पौधों पर सफेद रंग के फूल लगते हैं। गाजर घास के पौधे में कई विशिष्ट गुण होते हैं जिसकी वजह से इसका फैलाव निर्बाध गति से हो रहा है। गाजर घास का पौधा हर प्रकार की जलवायु और प्रतिकूल वातावरण में उगने की अद्‌भुत क्षमता रखता है। यह सभी प्रकार की भूमि में फलता–फूलता रहता है। भूमि की अम्लीयता और क्षारीयता का इसके अंकुरण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। यह प्रकाश एवं तापक्रम के प्रति उदासीन पौधा है। इसका अधिकतम अंकुरण 25 से 30 डिग्री सेल्सियस तापक्रम पर होता है। गाजर घास के एक पौधे से 5000 से 10,000 अत्यन्त सूक्ष्म बीज उत्पन्न होते हैं। गाजर घास के बीज बहुत छोटे व हल्के होते हैं जो हवा और जल के माध्यम से फैलते रहते हैं। इन बीजों की विशेषता ये है कि इनमें सुसुप्तावस्था नहीं पायी जाती है जिसके कारण बीज पकने के तुरन्त बाद जमीन में पुनः अंकुरित हो जाते हैं। गर्मी व बरसात के मौसम में पूर्ण बढ़वार के साथ फलते–फूलते रहते हैं। शीतकाल के मौसम में गाजर घास की वृद्धि कुछ कम होती है। गाजर घास 3 से 4 महीने में अपना जीवन चक्र पूरा कर लेता है यानी एक वर्ष में गाजर घास की तीन से चार पीढ़ियां होती हैं।

हैंडपम्प के चारों तरफ फैलती गाजर घास

गाजर घास का फैलाव घातकः एक सर्वेक्षण के अनुसार यह खरपतवार देश के लगभग 5 मिलियन (50 लाख) हेक्टेयर में फैल चुका है, जोकि दिन–प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। इसका कारण यह है कि इसको पूरी तरह से नष्ट करने के लिए 5 से 7 वर्ष का समय चाहिए, क्योंकि इसके बीज 5 से 7 वर्ष तक अंकुरण की क्षमता रखते हैं। इसको पूरी तरह से नष्ट करने के लिए जब यह पौधा उगता है और उस पर फूल नहीं आवें, उसके पूर्व ही इसको उखाड़कर सड़क पर फेंक देना चाहिए या इकट्ठा करके जला देना चाहिए। ये लगातार 5 से 7 वर्ष तक करना पड़ेगा, तब जाकर इस हानिकारक खरपतवार से छुटकारा पा

सकते हैं। आजकल इसका फैलाव शहरों में भी होने लगा है। शहरों में यह आवासीय भूखण्डों के सामने, सड़क के दोनों तरफ, रेलवे पटरियों के दोनों तरफ, हैण्डपम्प के चारों तरफ, खाली भूखण्डों में, औद्योगिक क्षेत्रों तथा सार्वजनिक स्थानों तथा ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक चरागाह, वन, सामाजिक भूमि तथा खेत की मेड़ों पर आसानी से देखने को मिल जाती है। गाजर घास के पौधे घातक एलिलो रसायन जैसे– एम्ब्रोसिन, पार्थेनिन, कोरोनोपीलिन, फेरूलिक अम्ल, वेनिलीक अम्ल, कैफिक अम्ल, पेरा–हाइड्रोक्सी बेन्जोइक अम्ल तथा पेरा–काउमेरिक अम्ल आदि स्त्रावित करते हैं, जिससे इसके आसपास अन्य पौधे या गाजर घास से कोई भी पौधा या फसल प्रतियोगिता नहीं कर पाती है। ये एलिलो रसायन विभिन्न फसलीय पौधों के अंकुरण और वृद्धि को प्रभावित करते हैं। यही एक मुख्य कारण है, जिसकी वजह से गाजर घास का क्षेत्रफल निरन्तर बढ़ता जा रहा है, जिससे हमारा वातावरण एवं पर्यावरण दोनों प्रदूषित हो रहे हैं।

गाजर घास के हानिकारक प्रभावः गाजर घास संभवतः विश्व का एकमात्र ऐसा खरपतवार है जो फसलों, मनुष्यों, पशुओं, वनों और वन्य प्राणियों सभी के लिए हानिकारक होता है। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

फसल उत्पादन परः अनुसंधानों से स्पष्ट हो चुका है कि कृषि उत्पादन में होने वाले नुकसान का 33 प्रतिशत विभिन्न खरपतवारों द्वारा होता है। हमारे देश में खरपतवारों के कारण लगभग 2000 करोड़ रुपये मूल्य की कृषि सम्पदा की हानि प्रति वर्ष हो जाती है। कृषि वैज्ञानिकों द्वारा किये गये अनुसंधानों के अनुसार गाजर घास के कारण खाद्यान्न फसलों की पैदावार में 40 प्रतिशत की कमी हो जाती है। वातावरण में उपस्थित गाजर घास के असंख्य परागकण पर–परागित फसलों के पौधों में मादा जनन अंगों के ऊपर एकत्रित हो जाते हैं जिससे उनकी संवेदनशीलता समाप्त हो जाती है और बीज नहीं बनने से फसलों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। गाजर घास के परागकण मक्का के पर–परागण में बाधा डालते हैं जिसकी वजह से मक्का की उपज 50 प्रतिशत तक कम हो जाती है। गाजर घास के परागकण सब्जी वाली फसलों जैसे टमाटर, बैंगन तथा मिर्च इत्यादि पर भी एकत्रित होकर उनके पराग अंकुरण एवं फल विन्यास को प्रभावित करते हैं तथा पत्तियों में क्लोरोफिल की उपलब्धता को भी प्रभावित करते हैं। इस प्रकार से पौधों की वृद्धि रुक जाती है। गाजर घास के पौधे में ऐस्क्यूटरपिन लैक्टोन नामक विषाक्त पदार्थ पाया जाता है जो फसलों के अंकुरण पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। खरपतवार गाजर घास के प्रभाव से दलहनी फसलों में जड़ ग्रन्थियों का विकास कम होता है तथा नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जीवाणुओं की क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

मानव स्वास्थ्य परः गाजर घास का मानव स्वास्थ्य पर बहुत हानिकारक प्रभाव पड़ता है। गाजर घास के एक फूल से असंख्य परागकण उत्सर्जित होते हैं। इसका एक परागकण किसी भी मनुष्य को अस्वस्थ करने के लिए पर्याप्त होता है। गाजर घास के परागकण हमारे आसपास के वातावरण में फैले रहते हैं जो हमें नंगी आंखों से दिखाई नहीं देते हैं। गाजर घास खरपतवार के सम्पर्क में आने से मनुष्यों में एलर्जी, डर्मेटाइटिस (त्वचाशोथ), एक्जिमा, दमा आदि जानलेवा बीमारियां हो जाती हैं। मनुष्यों में त्वचाशोथ रोग गाजर घास के निरन्तर सम्पर्क में आने से होता है जिसके कारण शरीर में खुजली चलती है और त्वचा लाल हो जाती है। जब गाजर घास के परागकण श्वास के साथ मनुष्य के शरीर में प्रवेश कर जाते हैं तो मनुष्य ब्रोन्कियल अस्थमा (दमा) रोग से ग्रसित हो जाता है। अतः ऐसे मनुष्यों को जिनको गाजर घास से एलर्जी हो, उनको इसके सम्पर्क में आने से बचना चाहिए। ये ही इसका एक सुरक्षित उपाय है। गाजर घास के परागकणों के अंदर मौजूद पार्थेनिन नामक रसायन मनुष्य के तंत्रिकातंत्र को प्रभावित कर डिप्रेशन (अवसाद) की स्थिति पैदा करते हैं।

पशु स्वास्थ्य परः गाजर घास अत्यधिक विषैला खरपतवार है। अतः इसके सेवन से पशुओं में अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते है। दुधारू पशुओं में दूध की मात्रा कम हो जाती हैं तथा दूध का स्वाद कड़वा हो जाता है। गाजर घास के निरन्तर सेवन से पशुओं में भूख की कमी, आंत व जीभ पर फोड़े पड़ जाना, बालों का झड़ना, खुजली होना आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। साथ ही पशु खांसी और दमा जैसे रोगों से ग्रसित हो जाते हैं।

गाजर घास और जैव विविधताः गाजर घास का जैव विविधता पर बहुत प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है क्योंकि इस खरपतवार के द्वारा चारे के लिए उपयुक्त घासों को विस्थापित किया जा रहा है। ये घासें (एक वर्षीय या बहुवर्षीय) वन चरागाह, जो सड़क के किनारे या सामाजिक भूमियों में उगती हैं, को गाजर घास ने विस्थापित कर दिया है जिससे पशुओं की चराई की समस्या उत्पन्न हो रही है। भारतीय वन अपनी जैव विविधता के कारण विश्व के मानचित्र में विशेष स्थान रखते हैं। भारतीय वनों में आज भी ऐसी सैंकड़ों वनोषधियां उपलब्ध हैं जिनके दिव्य औषधीय गुणों का सही आंकलन अभी तक नहीं हुआ है। भारतीय वनों में गाजर घास के अनियंत्रित प्रसार से बेशकीमती जड़ी–बूटियां नष्ट होती जा रही हैं। गाजर घास के दुष्प्रभाव से वन्य प्राणी भी अछूते नहीं हैं। यदि वर्तमान में गाजर घास को नियंत्रित करने का कोई उपाय नहीं किया गया तो

भविष्य में इस खरपतवार को नियंत्रित करना बहुत ही कठिन कार्य होगा।

गाजर घास का नियंत्रण: गाजर घास को नियंत्रित करना आसान काम नहीं है क्योंकि हमारे देश के बहुत बड़े क्षेत्र में इसका फैलाव हो चुका है, जोकि निरन्तर बढ़ता ही जा रहा है। आज विडम्बना इस बात की है कि हमारे देश की आबादी का एक बड़ा हिस्सा गाजर घास के बारे में नहीं जानता है। अतः गाजर घास के नियंत्रण के लिए यह आवश्यक है कि इससे होने वाले हानिकारक प्रभावों की व्यापक जानकारी जन–जन को उपलब्ध करायी जाए। गाजर घास के नियंत्रण हेतु सामाजिक चेतना पैदा की जाये तथा सामूहिक रूप से एक साथ मिलकर नियंत्रण अभियान चलाया जाए जिससे नियंत्रण के साथ–साथ इसका उन्मूलन किया जा सके। इस घास की रोकथाम मुख्यतः निम्नलिखित विधियों द्वारा की जा सकती है :

यांत्रिक विधि: गाजर घास में हर प्रकार के वातावरण में उगने की अद्भुत क्षमता है, किन्तु नम व छायादार स्थानों पर यह बहुतायत से होती है। इसको समूल नष्ट करने के लिए फूल आने व बीज बनने से पूर्व लगातार काटते रहना चाहिए। इस बात की सावधानी बरतनी चाहिए कि उखाड़ते व काटते समय शरीर के सीधे सम्पर्क में न आये क्योंकि सीधे सम्पर्क में आने से अनेक बीमारियां होने का खतरा रहता है। अतः गाजर घास को उखाड़ते या काटते समय हाथों में दस्ताना पहनना चाहिए और मुंह व कानों को अच्छी तरह से कपड़े से बांधना चाहिए। पैरों में भी बचाव के लिए खुले भाग पर, जहां स्पर्श होने की आंशका हो, वहां पर कपड़ा लपेट लेना चाहिए। गाजर घास को काटकर उसे इकट्ठा करके जला देना चाहिए।

कृषि विधियां: अनेक कृषि क्रियाओं जैसे–फसल चक्र अपनाकर, फसल की किस्मों का चयन, शुद्ध खरपतवार रहित बीज, बोने का समय, खाद की किस्म, पंक्तियों व पौधों की दूरी और कटाई की विधि को ध्यान में रखकर कृषक खेत में गाजर घास के प्रकोप को काफी सीमा तक कम कर सकता है। गाजर घास का फैलाव ना हो, इसके लिए खेत को कभी भी खाली नहीं रखना चाहिए। खेतों में गहरी जुताई करने से भी इसका प्रकोप कम होता है। भारतीय कृषि वैज्ञानिकों ने गाजर घास के प्रकोप को कम करने के लिए गेंदा, चरौटा तथा क्रोटन आदि ऐसे पौधे सुझाये हैं जो उपयोगी हैं व तेजी से बढ़ते हैं तथा गाजर घास की वृद्धि को कम करने में सहायक हैं। केसिया प्रजाति (केसिया सेरिसिया या केसिया यूनिफ्लोरा) के पौधे भी गाजर घास से प्रतियोगिता करके उसे नष्ट कर देते हैं।

गाजर घास से बायोगैस उत्पादन

जैविक नियंत्रण: कृषकों को इस विधि की जानकारी हमारे देश में अभी तक अधिक नहीं है। इस विधि को अपनाने से क्षेत्र में पाई जाने वाली गाजर घास की रोकथाम की जा सकती है। गाजर घास को नष्ट करने के लिए इस विधि में कीट–पतंगों व जीवाणुओं तथा अनेक प्रकार की वनस्पतियों का प्रयोग किया जाता है। कीटों में जाइगोग्रेमा बाइकोलोरेटा नामक कीट केवल गाजर घास के पौधों को ही नष्ट करता है। यह कीट भारतीय परिस्थितियों के लिए अनुकूल पाया गया है। हमारे यहां पर खेतों का आकार छोटा है तथा मिश्रित खेती की जाती है जिसके कारण जैविक नियंत्रण मुश्किल होता है।

रासायनिक विधियां: गाजर घास खरपतवार को लगातार उखाड़ते व काटते रहने से इस पर नियंत्रण तो पाया जा सकता है किन्तु काफी समय और धन व्यय करना पड़ता है। साथ ही पुनः वृद्धि की संभावना बनी रहती है। यदि खरपतवार रसायनों का सही समय पर उचित प्रयोग किया जाए तो गाजर घास को प्रभावशाली रूप से नष्ट किया जा सकता है। अनुपयोगी भूमि, सड़क के किनारे, रेलवे लाइन व सिंचाई की नालियों के आसपास तथा खेत की मेड़ों पर उगने वाली गाजर घास खरपतवार की छोटी अवस्था में, बढ़वार के समय तथा फूल आने से पूर्व 2,4–डी तथा सोडियम क्लोराइड नामक खरपतवारनाशक रसायनों का छिड़काव इसको नष्ट करने के लिए किया जाता है। नमक के 20 प्रतिशत घोल से गाजर घास को आसानी से नियंत्रित किया जा सकता है। कृषक

पांच गिलास पानी में एक गिलास साधारण नमक घोलकर पौधों पर छिड़काव कर सकते हैं। घरों के आसपास सीमित स्थानों पर गाजर घास को इस तरह नियंत्रित किया जा सकता है पर बहुत बड़े क्षेत्र के लिए यह विधि खर्चीली है, साथ ही भूमि में लवणता भी बढ़ती है। मक्का, ज्वार तथा बाजरा आदि फसलों में खरपतवारनाशक रसायनों एट्राजिन का, सोयाबीन, भिण्डी तथा टमाटर आदि फसलों में एलाक्लोर का, आलू तथा गोभी आदि फसलों में मेट्रीब्यूजिन का बुआई के तुरंत बाद तथा अंकुरण से पूर्व छिड़काव किया जाता है। फलदार वृक्षों में पौधों की रोपाई के तुरंत बाद तथा खरपतवार की छोटी अवस्था में डाइयुरान नामक खरपतवारनाशक रसायन का छिड़काव किया जाता है। केले और कॉफी की फसलों में एमेट्राइन तथा प्याज की फसल में ओक्साडाइजोन नामक खरपतवारनाशक रसायन का बुआई के तुरंत बाद छिड़काव किया जाता है। गाजर घास का रासायनिक नियंत्रण पर्यावरण के दृष्टिकोण से उचित नहीं है। ये रसायन न केवल मिट्टी बल्कि मिट्टी में उपस्थित लाभकारी सूक्ष्म जीवों के लिए भी हानिकारक होते हैं। इसके अलावा ये रसायन भूमिगत जल को भी प्रदूषित कर देते हैं। यदि यह कहा जाए कि गाजर घास को रासायनिक विधि से ही नियंत्रित किया जाए तो एक समस्या को हटाकर दूसरी भयानक समस्या को आमंत्रण देना होगा।

गाजर घास का उपयोगः महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर में गाजर घास पर किये गये अनुसंधान अध्ययन में इसका उपयोग बायोगैस उत्पादन एवं वर्मी कम्पोस्ट बनाने में किया गया। जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

बायोगैस उत्पादनः गाजर घास से बायोगैस उत्पादन के लिए इसको एकत्रित कर धूप में सुखाकर इसके 1 से 1.5 इंच आकार के टुकड़े कर लें। इस सूखी गाजर घास का उपयोग प्रयोगशाला में बायोगैस उत्पादन के लिए किया गया। गाजर घास से प्रयोगशाला में बायोगैस उत्पादन से पूर्व इसको 10 दिनों तक नियंत्रित तापमान पर रासायनिक उत्तेजकों (पायरोगेलोल रेड तथा इयोसीन येलो के दो स्तर 1 तथा 2 पी.पी.एम.) एवं सूक्ष्म जीवों (वोल्वेरिया डिप्लेसिया तथा फेनरोचिट क्राइसोस्पोरियम) से उपचारित किया था। साथ ही बिना उपचारित गाजर घास से भी बायोगैस उत्पादन करके देखा गया। प्रयोगशाला में रासायनिक उत्तेजकों एवं सूक्ष्म जीवों से उपचारित गाजर घास से 50 दिनों तक बायोगैस उत्पादन किया गया। अनुसंधान अध्ययन में पाया गया कि बिना उपचारित गाजर घास से 77.36 लीटर बायोगैस का उत्पादन प्रति किलोग्राम सूखा पदार्थ हुआ। सर्वाधिक बायोगैस का उत्पादन सूक्ष्म जीव वोल्वेरिया डिप्लेसिया से उपचारित गाजर घास से 159.66 लीटर प्रति किलोग्राम सूखा पदार्थ, फेनरोचिट क्राइसोस्पोरियम से उपचारित गाजर घास से 149.32 लीटर प्रति किलोग्राम सूखा पदार्थ तथा रासायनिक उत्तेजक इयोसीन येलो (1पी.पी.एम.) से 110.72 लीटर प्रति किलोग्राम सूखा पदार्थ हुआ, जोकि बिना उपचारित गाजर घास की तुलना में क्रमशः 106.39, 93.02 तथा 43.12 प्रतिशत ज्यादा था।

गाजर घास की पाचित स्लरी में फसलों के लिए आवश्यक मुख्य पोषक तत्वों जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटेशियम की मात्रा का विश्लेषण किया गया। अध्ययन में पाया गया कि मुख्य पोषक तत्वों की मात्रा ताजा गाजर घास की अपेक्षा पाचित स्लरी में 2 से 3 गुना बढ़ जाती है।

अतः गाजर घास से बायोगैस का उत्पादन कर गैस के रूप में घरेलू ईंधन तथा पाचित स्लरी के रूप में उत्तम जैविक खाद प्राप्त की जा सकती है, जिसका उपयोग फसल उत्पादन के लिए किया जा सकता है। अध्ययन में यह पाया गया कि गाजर घास का उपयोग बायोगैस संयंत्र में गोबर के पूरक के रूप में किया जा सकता है।

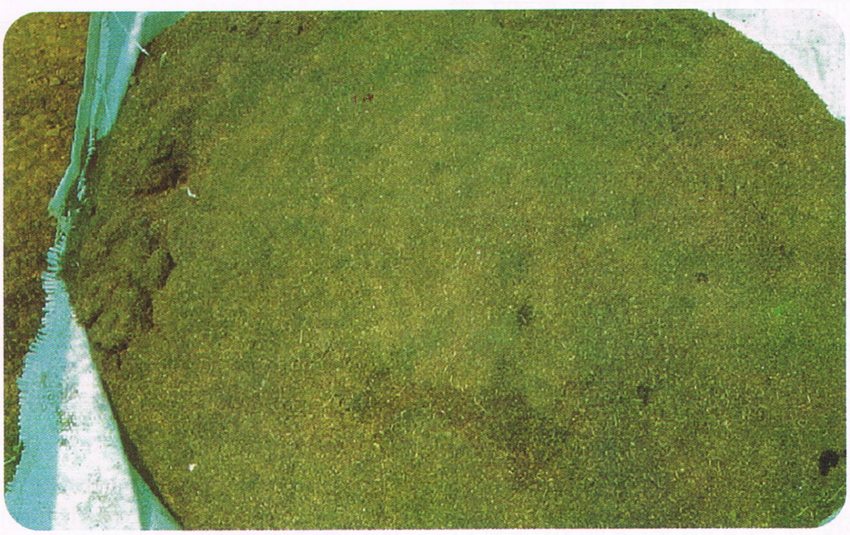

गाजर घास से तैयार वर्मी कम्पोस्ट

वर्मी कम्पोस्टः केंचुओं के अवशेष (मल), उनके कोकून सभी प्रकार के लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु, मुख्य एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों एवं जैविक पदार्थों का मिश्रण वर्मी कम्पोस्ट कहलाता है। साधारण तौर पर वर्मी कम्पोस्ट केंचुओं के अवशेष (मल) को कहते हैं। उपयुक्त तापमान, नमी, हवा एवं जैविक पदार्थ मिलने पर

केंचुएं अपनी संख्या बढ़ाने के साथ–साथ गोबर एवं वनस्पति आदि को जैविक खाद में परिवर्तित करते रहते हैं।

वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए ताजा गाजर घास को एकत्रित करके उसको चारा काटने की मशीन से छोटे– छोटे टुकड़ों में काट लें। इन टुकड़ों को बायोगैस संयंत्र की पाचित स्लरी या गोबर के साथ 1:2 के अनुपात में मिलाकर गाजर घास को अपघटित होने के लिए 7 दिनों तक सड़ने दें। गाजर घास से वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए 4 मीटर लम्बाई, 3 मीटर चौड़ाई तथा 2.5 मीटर ऊंचाई का शेड तैयार किया गया। इसमें सर्वप्रथम 2 फीट चौड़ी व आवश्यकतानुसार लंबाई की भूमि पर फसल अवशेषों की 2 इंच की मोटी परत (भूसा या कड़ब) को बिछाकर अस्थाई बेड तैयार किया। गाजर घास का मिश्रण, जिससे वर्मी कम्पोस्ट तैयार किया जाना है, उसे अच्छी तरह मिलाकर एक हाथ ऊंची डोली के आकार में तैयार बेड के ऊपर डाल दिया जाता है। इसके बाद 5–6 दिन तक लगातार दिन में एक बार पानी का छिड़काव करते हुए 2 दिवस के अन्तराल पर मिश्रण को पंजे की सहायता या हल्का फावड़ा चलाकर उलट–पुलट कर देते हैं। ऐसा करने से गाजर घास के मिश्रण में बनने वाली गर्मी निकल जाती है व मिश्रण ठंडा हो जाता है। तैयार डोली को ठीक आकार देकर उसके सहारे केंचुओं का कल्चर डालना चाहिए। 10 फीट लम्बी बेड में 3 किलो केंचुएं का कल्चर पर्याप्त रहता है। डाले गये कल्चर के केंचुएं तुरंत मिश्रण में प्रवेश कर जाते हैं। इसके पश्चात् वर्मीकल्चर बेड को बोरी के टाट से ढक देना चाहिए। क्योंकि केंचुएं अंधेरे में अधिक क्रियाशील रहते हैं। वर्मीकल्चर बेड में 30 प्रतिशत तक नमी बनाये रखने के लिए सर्दियों में एक बार तथा गर्मियों में प्रतिदिन दो बार फव्वारे की सहायता से हल्का छिड़काव करना चाहिए। सप्ताह में एक बार हल्का पंजा लगाकर बेड के अवशेषों की यथास्थान गुड़ाई कर दें। इससे बेड ठोस नहीं होगी और उसमें पर्याप्त वायु संचरण होता रहेगा जिससे केंचुएं अधिक क्रियाशील रहेंगे। केंचुएं सड़ती हुई ऊपरी परत को खाने लगते हैं तथा लगभग 45 से 50 दिन पश्चात् बेड के समस्त अवशेष वर्मी कम्पोस्ट में परिवर्तित हो जाते हैं। जब वर्मी कम्पोस्ट तैयार हो जाता है तब इसका रंग गहरा काला चाय की पत्ती की तरह एवं वजन में हल्का हो जाता है। ऐसा होने पर पानी का छिड़काव तुरंत बंद कर देना चाहिए। ज्यों–ज्यों बेड पर करीब 2 से 3 इंच मोटी वर्मी कम्पोस्ट की परत तैयार हो, उसे उतार लेवें। उतारी गई वर्मी कम्पोस्ट में शिशु केंचुएं व केंचुएं के अंडे (कोकून) हो सकते हैं। उन्हें अलग करने के लिए वर्मी कम्पोस्ट के चारों ओर गोबर रखें। समस्त केंचुएं गोबर में आ जायेंगे। तत्पश्चात् वर्मी कम्पोस्ट को छानकर बोरियों में भर लेवें। गाजर घास से तैयार वर्मी कम्पोस्ट में फसलों के लिए आवश्यक मुख्य पोषक तत्वों जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटेशियम की मात्रा का विश्लेषण किया गया। इसमें नाइट्रोजन 2.35 प्रतिशत, फॉस्फोरस 1.38 प्रतिशत एवं पोटेशियम 1.29 प्रतिशत पाया गया जोकि किसी भी फसल के लिए उपयुक्त खाद है।

गाजर घास से वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए केंचुएं की आईसीनिया फोइटिडा प्रजाति का प्रयोग किया गया। इनकी लंबाई 3 से 4 इंच तथा वजन 0.5 से 1 ग्राम होता है। इनका रंग लाल होता है। ये केंचुएं मृदा कम (10 प्रतिशत) और कार्बनिक पदार्थ ज्यादा (90 प्रतिशत) खाते हैं। अतः कार्बनिक पदार्थों से वर्मी कम्पोस्ट बनाने हेतु ये सबसे अधिक उपयुक्त होते हैं।

रासायनिक खाद के लगातार व असंतुलित प्रयोग से मृदा की भौतिक संरचना नष्ट होती जा रही है तथा उसकी उत्पादकता में दिन–प्रति–दिन कमी आती जा रही है। साथ ही ऐसी भूमि से प्राप्त अन्न व अन्य खाद्य पदार्थों में भी पोषक तत्वों की कमी होती जा रही है। अतः अब जरूरत है कि हम रासायनिक खाद की बजाय फसल उत्पादन में अधिक से अधिक कार्बनिक (जैविक) खादों का प्रयोग करें।

सावधानियां: गाजर घास के प्रकोप से बचने के लिए निम्नलिखित सावधानियां रखनी चाहिए–

- गाजर घास के पौधे को कभी भी नंगे हाथ से नहीं पकड़ना चाहिए।
- बच्चों को हाथ से गाजर घास कभी भी उखाड़ने नहीं देना चाहिए।
- ऐसा स्थान जहां पर गाजर घास बहुतायत में उगी हुई है, वहां पर बच्चों को खेलने नहीं देना चाहिए।
- गाजर घास की पत्तियों और पौधों को स्वागत या घरों में सजावट के लिए उपयोग में नहीं लेना चाहिए।
- घर के आसपास जहां पर गाजर घास नहीं है वहां पर इसका पौधा दिखते ही उखाड़कर फेंक देना चाहिए।
- गाजर घास का पौधा खाली जगहों पर आसानी से उग जाता है। अतः गाजर घास से बचे रहने का सबसे अच्छा उपाय ये है कि जहां तक संभव हो घरों के आसपास खाली जमीन ना छोड़ी जाये तभी जाकर इस हानिकारक खरपतवार के प्रकोप से बचा जा सकता है।

(लेखक राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर के आण्विक जीव विज्ञान और जैव प्रौद्योगिकी एवं जैव प्रौद्योगिकी विभाग में वरिष्ठ तकनीकी सहायक हैं।)

ई–मेल: khandelwalsk19@yahoo.com

फूलों के बीजों की लाभदायक खेती

शमशेर अहमद खान

प्राचीन काल से ही भारत के सामाजिक–सांस्कृतिक एवं धार्मिक जीवनशैली में फूलों का विशेष महत्व रहा है। लेकिन आधुनिक युग के बदलते परिवेश में भारत में फूलोद्यान व्यावसायिक रूप ले चुका है। आज भारत के फूलों की मांग विदेशों में काफी अधिक है इसलिए जहां एक ओर हमारे यहां फूलों के निर्यात को ध्यान में रखकर फूलों की खेती प्रतिवर्ष अपना विस्तार करती जा रही है वहीं दूसरी ओर फूलोद्यान में फूलों के बीजों की मांग भी विदेशों में अधिक होने लगी है। इस लिहाज से अब फूलों के बीजों की खेती का भविष्य किसानों के लिए वरदान साबित हो रहा है। कुछ एक दशक पूर्व पांच सितारा संस्कृति एवं नवपूंजीवाद से विकसित हुई नवसंस्कृति में दिन–प्रतिदिन के समारोहों में फूलों की खपत से फूलों की खेती की ओर छोटे–बड़े किसानों का ध्यान आकर्षित हुआ था और जिसका परिणाम यह निकला कि वर्ष 2006–2007 में हमारे देश में 0.83 मिलियन मीट्रिक टन बुके फूलों व 2740 मीलियन मीट्रिक टन कटिंग फूलों का उत्पादन 0.13 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में फैल गया।

रंग–बिरंगे फूलों की खेती फायदे का सौदा

इस परंपरागत फूलों की खेती में चमेली, गेंदा, क्रिस्थेमस, ट्यूबरोज और क्रोसंदा तथा कटिंग फूलों में गुलाब, आर्किड, ग्लेडिलस, कारनेशन, संथूरियम, गर्वेरा और लिली प्रमुख हैं। फूलोद्यान से संबंधित किसानों के लिए यह स्थिति और भी सुखद हुई जब भारत सरकार ने कटिंग फूलों के किसानों को अपने स्तर पर प्रोत्साहित करने हेतु योजनाएं कार्यान्वित की और इसका परिणाम सकारात्मक निकला। वर्तमान में एक अध्ययन के अनुसार आज कटिंग फूलों का व्यवसाय प्रतिवर्ष शत–प्रतिशत की दर से बढ़ता जा रहा है। इसमें वृद्धि का मूल कारण विकसित देशों यथा–जापान, सिंगापुर, यूरोप, आस्ट्रेलिया, उत्तरी एवं दक्षिणी देशों में भारतीय फूलों व उनके बीजों की बढ़ती मांग है।

इधर हाल के वर्षों में जबसे भारत सरकार ने इस क्षेत्र में शत–प्रतिशत विदेशी निवेश का मार्ग प्रशस्त किया है तब से यहां फूलों के बीजों की खेती की एक नई पहल की शुरुआत हुई है।

फूलों के बीजों की खेती काफी संवेदनशील खेती मानी जाती है। इसके लिए एक निश्चित तापमान व नमी की जरूरत पड़ती है। चूंकि हमारे देश का भौगोलिक क्षेत्र विभिन्न जलवायु क्षेत्रों में बंटा हुआ है इसलिए हम केवल उत्तरी क्षेत्र, विशेषकर गंगा–जमुना के मैदानी क्षेत्रों को ध्यान में रखते हुए फूलों की खेती पर विचार करेंगे और फसल चक्र का विवरण देंगे।

गंगा–जमुना के मैदानी क्षेत्रों में फूलों के बीजों की खेती का चक्र नवंबर से अप्रैल–मई तक होता है। इसके पश्चात् जून से अक्तूबर तक भूमि खाली रहती है जिसमें धान की फसल ली जा सकती है। इसके अतिरिक्त फूलों के खेतों में सहायक फसल जैसे मक्का, तोर भी उगाया जा सकता है जो किसान के लिए अतिरिक्त लाभ का स्रोत होता है। इसमें पहले हम भूमि को तैयार करने के उद्देश्य से नीचे दिए गए उपाय करते हैं :–

- फूलों को नमी की अत्यधिक आवश्यकता होती है इसलिए बारिश के पानी को भूमि के अंदर अधिक से अधिक संग्रह करके भूमि की नमी में वृद्धि करते हैं।
- भूमि से बह जाने वाले पानी को एकत्र करके उसका पुनरुपयोग किया जाना अपेक्षित होता है।
- पानी रोकने के लिए खेतों की मेड़ों का दुरस्त किया जाना जरूरी होता है। इससे पानी की रोकथाम के साथ–साथ मिट्टी के कटाव को रोका जाता है।

- खेत की अधिक से अधिक जुताई की जानी आवश्यक होती है ताकि मिट्टी को नरम किया ज़ा सके। इससे पौधों की जड़ें अधिक सुगमता से बढ़ती हैं।
- यदि भूमि क्षारीय हो तो क्षार की पपड़ी की गहराई तक मिट्टी निकालकर उसमें फूलों के बीज डाले जाएं।
- भूमि की नमी को बरकरार रखने के लिए चेकडैम व छोटे तालाब बनाए जाएं ताकि मिट्टी का कटाव कम से कम हो व सतह से बह जाने वाले पानी का संग्रह भी किया जा सके। इसके पश्चात् खेत के लिए खाद व पौधों के लिए कीटनाशकों की आवश्यकता होती है। इसमें इन बातों का ध्यान जरूरी होता है–
- देशी खाद (गोबर) या मील की खाद पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो।
- अरंड, नीम या महुए की खली भी होनी जरूरी है।
- रासायनिक खाद यथा–डाया, पोटाश व यूरिया खेत की उर्वरता को बढ़ाते हैं।
- बी.एस.सी. पाउडर के आर्ल्डेक्स पाउडर (दोनों के पांच प्रतिशत अथवा एक प्रतिशत डस्ट) के छिड़काव से हानिकारक कीटों से बचाव होता है।
- आल्ट्रीन 30 ई.सी. प्रवाही दीमकनाशक को मिट्टी में बुआई करते समय ही डाल देते हैं।

फूलों की फसल का प्रारंभिक चक्र अक्तूबर से शुरू होता है अर्थात् अक्तूबर में धान की फसल लेने के बाद खेत को पूरी तरह तैयार कर लें। इस बीच बोए जाने वाले फूलों यथा–फ्लोक्स, ओमोथेरा, सालविया, बर्वीना, रत्नाडिया, कोस्मोस, पेंजी, नेमाफेला, आदि की नर्सरी लगा दें। तीन सप्ताह में नर्सरी तैयार हो जाती है। यानी नवंबर के तीसरे सप्ताह में चक्र खेतों में रोपित करने योग्य हो जाता है। पौधरोपण के 20 दिन बाद यूरिया, डाया या पोटाश रासायनिक खादें दी जानी अपेक्षित होती हैं। लेकिन इस बीच पौधों को समय–समय पर पानी देकर इसकी नमी को बरकरार रखा जाता है। नमी के कारण इसमें खरपतवार उगते हैं। इसलिए इसकी निकाई जरूरी होती है। खरपतवार बढ़ते रहने से फूलों की फसल दब जाती है इसलिए निकाई बहुत जरूरी है। फूलों के पौधों में सामान्यतः मार्च में फूल आने शुरू हो जाते हैं। अच्छा व स्वस्थ बीज बने, इसके लिए परागण बहुत जरूरी है। यद्यपि प्राकृतिक कीट–पतंगे व मधुमक्खी आ जाती हैं किंतु यदि सहायक उद्यम के रूप में क्षेत्र के अनुपात में मधुमक्खियों का डिब्बा भी डाला जा सकता है जो किसानों को अतिरिक्त लाभ देगा।

फूलों के लिए ठंडा मौसम अनुकूल होता है। सामान्यतः नर्सरी लगाने के एक महीने बाद फूल आता है किंतु साल्विया एक ऐसा फूल है जो रोपण के 20 दिनों में ही फूल दे देता है। फूल से बीज बनने में लगभग 20 दिन लगते हैं। इस प्रकार नवंबर से मई के बीच कुछ फूलों के बीजों के कई चक्र लिए जा सकते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अगर हम कुछ बातों का ध्यान रखें तो फूलों के बीजों की खेती न केवल बड़ा किसान बल्कि छोटी जोत वाला किसान भी कर सकता है। इन फूलों के बीजों की कीमत हजारों रुपए प्रति कि.ग्रा. होती है। इनकी मांग विदेशों में विशेषकर अमेरिका में अधिक है।

फूलों के बीजों की फसल तैयार होने के बाद इसकी तुड़ाई की जाती है तत्पश्चात् सुखाकर व इनके बीज निकालकर क्रय केंद्रों को भेज दिए जाते हैं। देश में कुछ केंद्र हैं जो क्रय करते हैं।

इस प्रकार फूलों के बीजों की खेती करके आर्थिक लाभ उठाया जा सकता है। इस संबंध में अतिरिक्त जानकारी के लिए डब्लूडब्लूडब्लू. एग्रीकल्चर इंफारमेशन. कॉम पर संपर्क भी किया जा सकता है।

फूलों के बीजों की खेती करते हुए निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए :

- फूलों की खेती वाले खेत समतल हों।
- पौधों को बराबर पानी मिलता रहे। इसलिए पानी की अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए।
- नमी से खरपतवार बढ़ते हैं। खरपतवार से फसल दबती है इसलिए पौधों की निकाई अनिवार्य है।
- स्वस्थ बीज व फसल के लिए रासायनिक खादों का उचित मात्रा में प्रयोग करें।
- अतिरिक्त लाभ के लिए फूलों के साथ बीच–बीच में सहायक फसल भी उगाएं।
- सहायक उद्देश्य के रूप में मधुमक्खी पालन अवश्य करें। उत्तम शहद किसान को अतिरिक्त लाभ देगा।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

ई–मेल : shamsher_53@rediffmail.com

सीताफल एक उपयोगी शाकीय फल

मधु ज्योत्सना

लता प्रवर्ग (कुकर बिटेसी परिवार) का बृहदाकार फल कुम्हड़ा यानी सीताफल गरीब व्यक्ति के घर भोजभात, मरनी–करनी में उपयोग होने वाली बहुउपयोगी सब्जी है। यद्यपि इसे सम्पन्न लोगों के घरों में हेय दृष्टि से देखा जाता है। इसे वातकारी एवं कफकारी और गुणहीन माना जाता है इसलिए सम्पन्न लोगों के द्वारा इसका प्रयोग बहुत कम किया जाता है लेकिन यह गरीबों की विशेष सब्जी वाली फसल है।

समाज में कुम्हड़े के गुणहीन और नुकसानदायी होने की प्रचलित सोच भ्रामक और अज्ञानता से युक्त व अवैज्ञानिक है। वस्तुतः कुम्हड़े के फल में अनेक उपयोगी तत्त्व भी पाये जाते हैं जिसके कारण इसका प्रयोग अनेक रोगों के निवारण के साथ ही आधुनिक युग की भयावह लाइलाज बीमारी कैंसर और मोटापे में अत्यंत उपयोगी है।

आयुर्वेद में कुम्हड़ा

आयुर्वेदिक विशेषज्ञों के अनुसार कुम्हड़ा मधुर, विस्टंभकारक तथा मलवर्द्धक होता है। यह शरीर को शक्ति देने के साथ ही मोटापे से भी बचाता है। कुम्हड़े में पाये जाने वाले कफ और वातकारी तत्त्वों पर नियंत्रण के लिए आयुर्वेदिक विशेषज्ञों का मत है कि इसकी सब्जी बनाते समय इसमें मेथी का दाना प्रयोग करना चाहिए। इसकी एक किलो सब्जी में एक से आधा ग्राम मेथी का प्रयोग करने से इसका वात और कफकारी प्रभाव जाता रहता है।

भारत में विभिन्न प्रांतों में कुम्हड़ा

कुम्हड़ा यानी सीताफल की सब्जी का प्रयोग भारत के सभी भागों के सामान्य जनों द्वारा किया जाता है। कुम्हड़ा गरीब और गांव के लोगों द्वारा अधिक प्रयोग की जाने वाली सब्जी है। संभवतः इसीलिए संस्कृत में इसे 'ग्राम्य' नाम दिया गया है। इस बहुजन प्रयोगी शाकीय फल को देश के विभिन्न हिस्सों में अलग–अलग नामों से संबोधित किया जाता है, जिनमें से कुछ नाम इस प्रकार हैं – संस्कृत में इसे पीत–कुष्माण्ड, बृहत्फल, ग्राम्य और गुड़योग फल कहते हैं। हिंदी में इसे कुम्हड़ा, कोहड़ा, लाल कद्दू, मीठा कद्दू, सीताफल और कोला भी कहा जाता है। मराठी क्षेत्रों में इसे कोहला, लाल भोपला, तांबड़ा और भोपला कहते हैं। बंगाल क्षेत्र में इसे सफरोई, कुमड़ों, कुमड़ा और कुमरा कहते हैं। गुजराती में इसे पीलु, और कोहलुं कहा जाता है। इसका अंग्रेजी नाम ग्रेट पंबकिन और रेड गार्ड है। लैटिन में इसे कुकर बिटा मैक्सिमा और 'बेनिनकेसा हिस्पिडा' कहते हैं।

कुम्हड़े में पाये जाने वाले तत्त्व

कुम्हड़े में पाये जाने वाले तत्त्वों के विषय में वैज्ञानिक विश्लेषणों से स्पष्ट है कि कुम्हड़े के 100 ग्राम गूदे में नमी 96.1 ग्राम, प्रोटीन 0.2 ग्राम, वसा 0.1 ग्राम, मिनरल्स 0.5 ग्राम, रेशा 0.6 ग्राम, कार्बोहाइड्रेट्स 2.5 ग्राम, कैल्शियम 20 मिलीग्राम, फास्फोरस 10 मिलीग्राम, लौह तत्त्व 0.7 मिलीग्राम, तथा कुछ मात्रा में विटामिन 'बी' काम्प्लेक्स, विटामिन 'ए', विटामिन 'के' व कुछ अन्य विटामिन थोड़ी–थोड़ी मात्रा में पाये जाते हैं। कुम्हड़े में एण्टी एडी ऑक्सिडेण्ट प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

कैंसर और मोटापे से बचाता है सीताफल

रोग निवारण में कुम्हड़ा

कुम्हड़ा की रोग निवारक क्षमताएं इस प्रकार हैं :–

- कुम्हड़े में जीवाणुओं को नष्ट करने की अद्भुत क्षमता पायी जाती है।
- यह एक प्राकृतिक जीवाणुनाशक औषधि का काम करता है।

- सड़े–गले घाव पर कच्चे कुम्हड़े की पट्टी लाभकारी रहती है।
- सौ से पचास ग्राम कच्चा कुम्हड़ा सेवन करने से सेप्टिक रुक जाता है।
- पशुओं को सेप्टिक में कुम्हड़े का फल खिलाना लाभकारी होता है।
- कुम्हड़े के बीज से पेट की कृमि का नाश हो जाता है।
- कुम्हड़े का बीज विषकारी प्रभाव का शमन करता है।

मूत्र कृच्छ एवं अन्य मूत्र विकारों में कुम्हड़े के बीज का गुदा औषधि का काम करता है। मूत्र विकार में कुम्हड़े के बीज की 25 से 50 ग्राम मात्रा शहद के साथ लेनी चाहिए।

कुम्हड़े में कैंसररोधी तत्त्व पाया जाता है। मलेशिया स्थित सैंस विश्वविद्यालय के प्रो. नूर अजियाज अब्दुल ने कुम्हड़े पर शोध में पाया कि कुम्हड़े में उपस्थित माड़ी (स्टार्च) प्रोपियोनिक एसिड नामक रसायन का स्राव करती है जो कैंसर की कोशिकाओं को कमजोर कर देती है। इससे कैंसरकारी कोशिकाओं का विकास रुक जाता है। कुम्हड़े के प्रयोग से हानिकारक कोशिकाओं की प्रजनन क्रिया बंद हो जाती है। अपने प्रयोग के परिणाम के आधार पर प्रो. नूर ने कैंसर के रोगियों को जोर देकर कुम्हड़े के प्रयोग की सलाह दी है।

कुम्हड़ा बिच्छू, बर्रे, मधुमक्खी, ततैया, कनखजूरा, कांतर के डंक से होने वाले विषकारी कष्ट का अच्छा निवारक है। इन विषकारी जंतुओं के डंक मारने पर शरीर के प्रभावित भाग पर कुम्हड़े के डण्ठल को घिसकर लगाना चाहिए।

कुम्हड़े का बीज

कुम्हड़े के गूदे के अलावा इसके बीज में भी कई तरह के तत्त्व पाये जाते हैं। इसके बीज में 36.6 प्रतिशत तेल पाया जाता है। कुम्हड़े के बीज से निकलने वाला भूरे रंग का तेल अत्यंत उपयोगी है। इस तेल से मालिश करने से स्नायुमण्डल पुष्ट होता है। इस तेल के प्रयोग से मस्तिष्क दुर्बलता में पर्याप्त लाभ होता है। इससे मनुष्य की याददाश्त बढ़ जाती है। कुम्हड़े के बीज का तेल लगाने से बालों का रूखापन, रूसी और अनिद्रा में लाभ होता है और अच्छी नींद आती है।

कुम्हड़े की दैनिक उपयोगिता

सामान्यतया कुम्हड़े की खेती गर्मी और वर्षा ऋतु में होती है। ग्रीष्म ऋतु में उगने वाली इसकी लता जमीन पर फैलकर फलती है। वर्षाकाल में उगने वाले कुम्हड़े की लता जमीन के ऊपर पेड़ों, छतों, छप्परों और मचान पर फैलकर फलती है।

कुम्हड़े का फल महीनों तक खराब नहीं होता, इसलिए इसे तोड़ने के बाद महीनों तक रोककर उपयोग किया जा सकता है। कच्चे कुम्हड़े का छिलका हरा और गूदा हल्का पीलापन लिए हुए सफेद रहता है, वही पके कुम्हड़े का छिलका पीला कत्थई हो जाता है। इसका गूदा और बीज पीला हो जाता है। कच्चे और पके कुम्हड़े का स्वाद अलग–अलग होता है। लोग अलग–अलग पसंद के अनुसार कच्चे और पके कुम्हड़े से सब्जी, पकौड़ा चटनी आदि पकवान बनाते हैं। पके कुम्हड़े से सब्जी, चटनी, गुलगुला और ठोकवा बनाया जाता है। कुछ लोग कुम्हड़े के नर फूल से सब्जी, साग और स्वादिष्ट पकौड़ी बनाते हैं। बंगाल के लोग कुम्हड़े की पत्ती और उसके लता के डण्ठल का स्वादिष्ट साग बनाकर चावल से खाते हैं।

कुम्हड़े की खेती अत्यंत निरापद और आसान है। इसकी लता को चराऊ पशु नहीं चरते, क्योंकि इसके पत्ते और डाल की गंध शाकाहारी पशुओं को अच्छी नहीं लगती। इस प्रकार पशुओं से प्रभावित क्षेत्र में भी कुम्हड़े की खेती आसानी से हो सकती है। कुल मिलाकर कुम्हड़ा एक अत्यंत उपयोगी सब्जी है। इसकी सब्जी में हमेशा मेथी डालकर प्रयोग करने पर किसी प्रकार की समस्या नहीं होती।

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार एवं लोकोत्थान समिति से संबद्ध हैं।)

कुरुक्षेत्र मंगवाने का पता

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड-4, तल-7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

जनसहभागिता से विकास करते दो गांव

रामचरण धाकड़

भरतपुर जिले के बयाना तहसील क्षेत्र के दो अनुसूचित जाति बाहुल्य गांवों नगला रामोली व श्रीनगर के निवासियों ने आजादी के 60 वर्षों बाद भी विकास की किरण तक नहीं देखी थी।

इन गांवों में न तो विद्युत थी और न ही आने–जाने के लिए सड़क। स्वास्थ्य एवं शिक्षा का तो दूर का भी नाता नहीं था। वर्षाकाल में बीमार मरीज को खाट पर रखकर 3–4 फुट पानी में होकर पैदल आठ–दस किलोमीटर पास के बड़े गांव में उपचार के लिए ले जाना पड़ता था। गरीबी एवं अभाव इस गांव के निवासियों की नियति बन गई थी। दिन भर खेतों में काम कर जैसा रूखा–सूखा मिला, बस उसी में सन्तोष उनके जीवन का हिस्सा बना हुआ था। लेकिन सरकारी, गैर–सरकारी संगठनों एवं ग्रामीणों के सहयोग से नगला रामोली एवं श्रीनगर में शुरू कराए गए विकास कार्यों के ऐसे परिणाम सामने आने लगे हैं जो गांव की खुशहाली की कहानी स्वयं कहने लगे हैं।

सोलर लाइट में अध्ययन करते छात्र

इन दोनों गांवों में जहां शिक्षा के प्रति कोई लगाव नहीं था, वहां गांवों में शत–प्रतिशत नामांकन के साथ उच्च प्राथमिक स्तर का अध्ययन करने के बाद छात्र–छात्राएं उच्च अध्ययन के लिए जाने लगे हैं। ग्रामीणों की सामाजिक सुरक्षा की दृष्टि से सभी परिवारों ने दुर्घटना बीमा करा लिया और सामूहिक रूप से कार्य करने के लिए 2 महिलाओं एवं 2 युवाओं के स्वयंसहायता समूह भी बना लिए हैं। महिला समूह खेतिहर मजदूरी छोड़कर समूह के रूप में तुलसीमाला निर्माण अथवा रेडीमेड वस्त्र निर्माण करते नजर आते हैं। चूल्हे को छोड़कर महिलाएं गोबर गैस से संचालित गैस चूल्हे पर खाना बनाती हैं जिसके लिए इन दोनों गांवों में 12 सामुदायिक बायोगैस संयंत्र स्थापित किए गए हैं।

गांवों में आई खुशहाली के कारण ग्रामीण राष्ट्रीय महत्व के कार्यक्रमों से जुड़ने लगे हैं। गांव के अधिकांश पुरुष परिवार कल्याण के संसाधन अपनाने के साथ–साथ वृक्षारोपण, सर्व शिक्षा अभियान जैसे कार्यक्रमों से जुड़ने लगे। जल संरक्षण के लिए दोनों गांवों में एक–एक तालाब खुदवाए गए हैं जिनसे ग्रामीणों के पशुओं को वर्षभर पानी उपलब्ध हो रहा है। ग्रामीणों की विकास की चाहत इतनी विकसित हो गई है कि इन गांवों के चयनित लोगों ने राष्ट्रीय बकरीपालन अनुसंधान केंद्र, मखदूम (मथुरा) एवं राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, जींद (हरियाणा) का भी अवलोकन किया है। बालिका जन्म को प्रोत्साहित करने के लिए ये दोनों गांव अब शत–प्रतिशत साक्षरों की श्रेणी में शामिल हो गए हैं। यही नहीं बल्कि यहां सोलर स्ट्रीट लाइटें होने से बिजली भी नहीं जाती। कहने का तात्पर्य यह है कि ये दोनों गांव विकास की होड़ में शामिल हो गए हैं। गांव की नवजात 5–5 कन्याओं को 'बेटी एक अनमोल रत्न योजना' के तहत् प्रत्येक को एक–एक हजार रुपये के राष्ट्रीय बचतपत्र, नवीन वस्त्र व मिष्ठान देकर सम्मानित करने का अनूठा कार्यक्रम शुरू किया है।

विकास की किरण बना औद्योगिक परिसंघ

बयाना तहसील क्षेत्र का नगला रामोली एवं श्रीनगर दोनों ही गांव शत–प्रतिशत अनुसूचित जाति के परिवारों के हैं। इन दोनों गांवों में आधारभूत सुविधाएं एवं आर्थिक गतिविधियां संचालित

करने के लिए भारतीय औद्योगिक परिसंघ ने संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू.एन.डी.पी.) एवं गैर–परम्परागत ऊर्जा मन्त्रालय (एम.एन.ई.एस.) के सहयोग से एक परियोजना तैयार कर क्रियान्वयन के लिए लुपिन लिमिटेड औद्योगिक घराने की लुपिन ह्यूमन वैलफेयर एंड रिसर्च फाउण्डेशन स्वयंसेवी संस्था को दिया गया। इसने राज्य एवं केंद्र सरकार की ग्रामीण विकास की संचालित योजनाओं का समावेश कर जनसहभागिता से इन दोनों गांवों में ग्रामीण विकास की गतिविधियां दो वर्ष पहले प्रारम्भ की। जनसहयोग से शुरू हुई गतिविधियों के सार्थक परिणामों से अनुसूचित जाति के ये दोनों गांव बयाना तहसील के लाइट हाउस बन गए हैं।

गोबर गैस पर खाना बनाती महिला

नगला रामोली एवं श्रीनगर गांव पक्की सड़क से जुड़ गए हैं तथा सोलर लाइटों से घर ही नहीं अपितु गांवों की गलियां भी जगमगा उठी हैं। पीने के पानी के लिए सार्वजनिक नलकूप बनवाने के अलावा खाना बनाने के लिए सामुदायिक गोबर गैस संयंत्र लगवाए गए हैं। विद्युत आधारित संयंत्रों के संचालन के लिए गैसीफायर लगाए गए हैं जिससे आसपास की भूमि की उर्वरता का क्षरण करने वाले इज़राइली बबूलों का उपयोग इस गैसीफायर में विद्युत ऊर्जा के लिए किया जा रहा है। ग्रामीणों को स्वरोजगार के संसाधनों के लिए बकरी एवं भैंस पालन के लिए ऋण मुहैया कराया गया तथा गांव में आटा चक्की, रेडीमेड वस्त्र निर्माण, तुलसीमाला निर्माण, मसाला पिसाई जैसे कार्य शुरू कराए गए हैं जिससे इन दोनों गांवों के करीब 60 से 70 प्रतिशत लोगों को स्वरोजगार मिला है।

दूर से ही नजर आते हैं ये दोनों गांव

बयाना तहसील क्षेत्र के अन्य विद्युतीकृत गांवों में रात्रि को जब विद्युत सप्लाई ठप्प हो जाती है तो नगला रामोली व श्रीनगर गांवों में लगी सोलर स्ट्रीट लाइट एवं 95 घरों में लगी सोलर लाइटें पूरी रात जगमगाती रहती हैं जिससे रात्रि के अंधेरे में यह गांव जगमग नजर आते हैं। साथ ही अन्य गांवों से या उनके कोई रिश्तेदार गांव में आते हैं और वहां महिलाओं को बायोगैस पर खाना बनाते देखते हैं तो उनके मन में भी यही भावना पैदा होती है कि उनके यहां भी ऐसे संयंत्र लगें। बायोगैस संयंत्र देखने वालों की भावनाएं भी अधूरी नहीं रही बल्कि इसी तर्ज पर जिले के बौरई, श्यौराना, कुचावटी, खेरिया जाट आदि गांवों में गोबर गैस संयंत्र स्थापित हो चुके हैं।

जिन विकास योजनाओं एवं कार्यक्रमों में ग्रामीणों का सकारात्मक सहयोग रहा है, उनके अपेक्षित परिणाम मिले हैं। नगला रामोली एवं श्रीनगर गांवों में सकल विकास में औद्योगिक घरानों एवं स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका रही है। यदि ऐसे ही कुछ अन्य पिछड़े गांवों के उत्थान के लिए सहयोग मिले तो विकास की गति में इज़ाफा होगा और ग्रामीणों को गरीबी से मुक्ति मिलेगी तथा वे समाज की मुख्यधारा में शामिल हो सकेंगे।

(लेखक सूचना एवं जनसम्पर्क कार्यालय भरतपुर में कार्यरत हैं।)

हमारे आगामी अंक

अक्तूबर, 2008 – विशेषांक ग्रामीण स्वास्थ्य पर आधारित होगा।

नवंबर, 2008 – श्वेत क्रान्ति।

दिसंबर, 2008 – भारतीय जनजाति और उनका संरक्षण पर आधारित होगा ।

इसके अतिरिक्त ग्रामीण विकास, परिवहन, सड़कें, बिजली, कृषि व स्वास्थ्य से संबंधित लेख भी इनमें शामिल किए जाएंगे । उपरोक्त विषयों पर सारगर्भित लेख (आम बोलचाल की भाषा में) व फोटो हमें भेजे जा सकते हैं । पत्रिका के प्रकाशन की तिथि आगामी माह से तीस दिन पूर्व होती है। अतः प्रकाशन सामग्री कम से कम 45 दिन पूर्व हमें मिल जानी चाहिए।

सही समय पर सही चुनाव
उज्जवल भविष्य का आधार

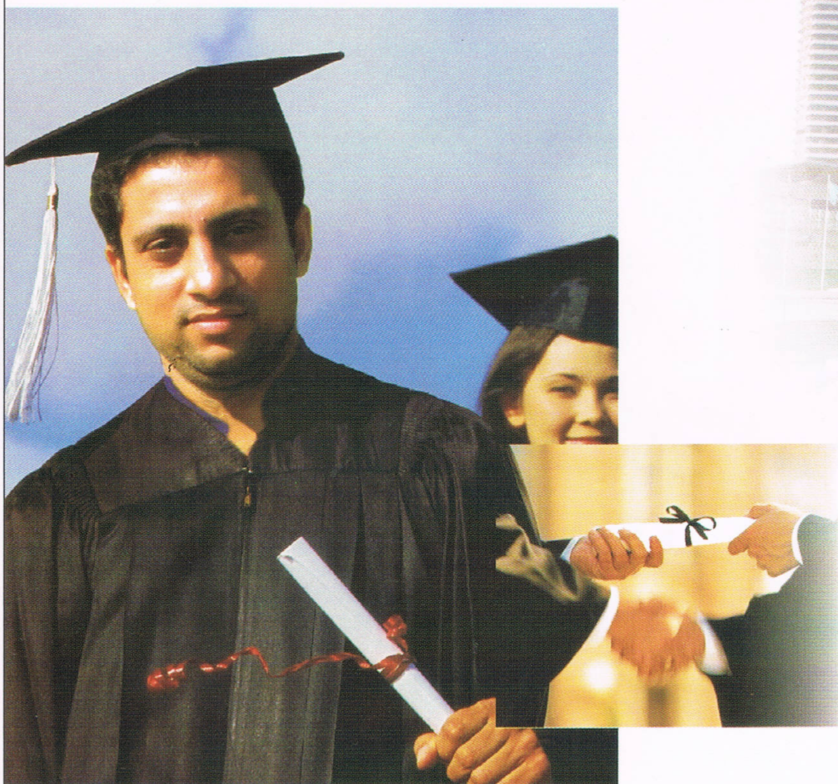

जागो ग्राहक जागो

सयानी रानी की ज़बानी....

प्रवेश लेने से पहले संबंधित शिक्षा संस्थान के बारे में पूरी जानकारी अवश्य लें।

डिग्री / डिप्लोमा अथवा इंस्टीटयूट की मान्यता
संबंधित जानकारी के लिए संपर्क करें

* मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार (www.education.nic.in)
* विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (www.ugc.ac.in)
* अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (www.aicte.ernet.in)
* राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (www.ncte-in.org)
* भारतीय विश्वविद्यालय संघ (www.aiuweb.org)
* भारतीय चिकित्सा परिषद् (www.mciindia.org)
* दूरस्थ शिक्षा परिषद् (www.dec.ac.in)

उपभोक्ता राष्ट्रीय हेल्पलाइन नंबर
1800–11–4000 (निःशुल्क) पर सम्पर्क कर सकते हैं।
(बीएसएनएल / एमटीएनएल लाइनों से)
अथवा 011–27662955,56,57,58 (सामान्य कॉल दरें)

सत्यमेव जयते

जन हित में जारी
उपभोक्ता मामले, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय
उपभोक्ता मामले विभाग, भारत सरकार
कृषि भवन, नई दिल्ली–110 001 : वेबसाइट : www.fcamin.nic.in

KH-09/08/01

आर. एन. / 708 / 57
डाक–तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)–05 / 3164 / 2006–08
आई.एस.एस.एन. 0971–8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)–55 / 2006–08

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2006-08
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2006-08
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रक : वीना जैन, अपर महानिदेशक (प्रभारी), प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया-II, नई दिल्ली-110 020 : वरिष्ठ संपादक : कैलाश चन्द मीना